तृतीय अध्याय

पृष्ठ 61-97

"भूले बिसरे चित्र' उपन्यास

के

पात्र और उनका चरित्र चित्रण"

* * *   * * *

***

चरित्र विधान उपन्यास का द्वितीय तत्व माना गया है । प्रारंभिक हिन्दी उपन्यासों मे कहानी को ही सर्वाधिक महत्व दिया जाता था, जब कि आज वह स्थान चरित्र ने ले लिया है । अतः आधुनिक हिन्दी उपन्यासों मे चरित्र - चित्रण को असाधारण महत्व दिया जाता है । "कहानी से भी अधिक रुचिकर प्रसंग उपन्यास में चरित्र अथवा नायक होता है । इसमें कहानी की भांति पाठकों के मन में यह उत्सुकता नहीं रहती कि आगे क्या होगा, बल्कि यह जानने की वह इच्छा रखता है कि अमुक घटना का प्रभाव उपन्यास के किस व्यक्ति पर क्या पडेगा ।"[1]

वस्तु - विधान उपन्यास का शरीर तत्व है वहाँ चरित्रविधान उसका प्राण - तत्व है, इसमें दो मत सम्भव नहीं । चरित्र विधान के अभाव में उपन्यास में प्राणों का स्पन्दन नहीं हो सकता । डा. महावीरमल लोढ़ा के मतानुसार "उपन्यासकार पात्रों में प्राणों की चेतना फूंकता है । उपन्यासकार निश्चित जीवन दृष्टि की स्थापना के लिए पात्रों का निर्माण करता है । उपन्यासकार का उद्देश पाठकों को चरित्र से परिचित कराना है कि उसके मस्तिष्क के प्राणी बोलते हुए, घूमते हुए, जीवित मानव प्राणियों की तरह दीखें ।"[2]

उपन्यास के सजीव पात्र ही उपन्यास में प्राण फूंकते हैं । कथावस्तु का विकास चरित्र के विकास के लिए होता है और चरित्र का विकास कथावस्तु में सजीवता, वास्तविकता और उसका विकास करने में सहायक होता है । चरित्र - चित्रण के अभाव में उपन्यास की सफलता की कल्पना करना भी निराधार है । चरित्र की अभिव्यक्ति और सृजन के लिए ही कथावस्तु का ढांचा तैयार किया जाता है और चरित्र के माध्यम से ही उपन्यासकार निश्चित जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति करता है । उपन्यासकार अपनी बुद्धि, कल्पना और यथार्थता के योग से सजीव पात्रों की अभिव्यक्ति करता है और सजीव पात्र ही उपन्यास को पूर्णत्व प्रदान करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं । प्राणवान पात्र उपन्यास के पढ़ने के पश्चात हमारी स्मृति में छाया रहता है किन्तु प्राणहीन पात्र, उपन्यास की समाप्ति पर ही कल्पना और स्मृति से लोप हो जाता है ।

उपन्यास के पात्रों का वर्गीकरण पात्रों के चरित्र के विकास और लेखक के प्रभाव और नियंत्रण के आधार पर किया जा सकता है । चारित्रिक विकास के आधार पर मुख्य दो भेद किए

जाते है (अ) विकसनशील पात्र और (आ) अविकसनशील पात्र । कहना न होगा कि विवसनशील पात्रों के जीवन में घटनाओं का उतार - चढ़ाव नहीं आता बल्कि उपन्यास में उनके व्यक्तित्व की एकाध झलक ही दिखाई देती है किन्तु विकसनशील पात्रों के जीवन में घटनाओं के मोड़ आते रहते हैं और उनके जीवन के अनेक पहलुओं का उद्घटन पाठकों को हो जात है । उपन्यासकार अपने व्यक्तिगत प्रभाव के अनुसार विकसित और अविकसित पात्रों का सृजन उपन्यास में करता है ।

लेखक के प्रभाव और नियंत्रण के आधार पर इसके पध्दपात्र और मुक्त पात्र इस प्रकार और दो भेद किए जा सकते हैं । परतंत्र या पध्दपात्र लेखक के हाथों की कठपुतली और मशीन के साँचे होते हैं किन्तु मुक्त पात्र अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति में स्वतंत्र होते हैं । उपन्यास के पात्र लेखक के व्यक्तित्व से पूर्णतः मुक्त होने चाहिए और लेखक को केवल एक तटस्थ निरीक्षक के रूप में पात्रों का निरीक्षण करना चाहिए । उपन्यास के पात्र पाठकों पर अपना प्रभाव स्थापित करनेवाले हों, पात्रों की क्रीडाओं को देख पाठक चकित रह जाना चाहिए । डा. महावीरभल लोढ़ा के शब्दों में, "उपन्यास में पात्रों को जीवन की प्रतिकृति, अभिव्यक्ति और व्याख्या के रूप में प्रकट न कर, जीवन की सृजनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में प्रकट करना चाहिये ।"[3] संक्षेप में उपन्यास के पात्र सजीव, मानव जीवन से सम्बन्धित तथा प्रभावशाली और अविस्मरणीय होने चाहिए । पात्रों का विकास स्वाभाविक एवं विश्वसनीय गति से होना चाहिए ।

* * *

"भूले बिसरे चित्र" में पात्र एवं चरित्र चित्रण :

x x x

'भूले बिसरे चित्र' की कथा पुरे राष्ट्रीय धरातल पर एक ही परिवार के चार पीढ़ियों के वर्ग संघर्षो और बदलती मान्यताओं को उपस्थित करती है । उपन्यास की कथा व्यक्ति, परिवार, वर्ग और राष्ट्र की गतिशील चेतना को लेकर पचास वर्षो की यात्रा करती हुई, चुकते और उभरते जीवन मुल्यों, सम्बन्धों और उनके संघर्षो को अनेक पात्रों के जरिये सच्चाई के साथ प्रस्तुत करती है । उपन्यास में एक परिवार के चार पीढ़ियों की कथा है, जिसके साथ भारतीय - जीवन की लगभग अर्धशताब्दीकी विशाल धारा बहती है । उपन्यास में चित्रित चार पारिवारिक पीढ़ियों को राष्ट्रीय पीढ़ियों के रूप में देखा गया है । लेखक ने सामन्तवाद, पूँजीवाद (उच्च वर्ग) नौकरशाही (मध्यम - वर्ग) और निम्न वर्ग आदि के पारस्पारिक संघर्ष के जरिये देश का सजीव चित्र अंकित किया है इस परिवर्तनशील भारतीय जीवन को समग्रता के साथ चित्रित करने के लिए लेखकको अनेक सजीव चरित्रों की अभिव्यक्ति करनी पड़ी है ।

उपन्यास में छोटे बड़े पात्र मिलाकर लगभग ड़ेढ़ सौ पात्र हैं, जो सामाजिक परिस्थितियों से जूझते हुए गिरते - उठते हैं और उसी में विलीन होते हुए कथा - प्रवाह को आगे बढ़ाते चलते हैं । पात्रों की बहुलता, यथार्थता, विविधता और गहराई के कारण 'भूले बिसरे चित्र' हिन्दी की श्रेष्ठतम् रचना बन गई है । उपन्यास के अधिकतर पात्र लेखक के हाथ की कठपुतली बन गए हैं । लेखक घटनाओं और प्रसंगों के अनुरूप कुछ पात्रों को वापस उठा लेता है तो कुछ को अनायास ही कालकवलित कर देता है ।

उपन्यास के अधिकतर पात्र वर्गगत हैं और लगभग सभी पात्र किसी न किसी वर्ग का प्रतिनिधीत्व करते हैं । स्थूल रूप से 'भूले बिसरे चित्र' के पात्रों का विभाजन तीन वर्गों में किया जा सकता हैं - (1) उच्च वर्गीय पात्र (2) मध्य - वर्गीय पात्र (3) निम्न वर्गीय पात्र । 'भूले बिसरे चित्र' में भगवती बाबू की एक खास विशेषता दिखाई देती है कि वे अधिकतर पात्रों का परिचय अन्य चरित्रों के जरिये न देकर खुद उनका परिचय दे देते हैं । उपन्यास के प्रमुख पात्रों में मुंशी शिवलाल, ज्वालाप्रसाद, गंगाप्रसाद, नवलकिशोर और विद्या आदि का समावेश है । उपन्यास के गौण किन्तु अविस्मरणीय पुरूष पात्र हैं - प्रभुदयाल, बरजोरसिंह, लक्ष्मीचन्द, मुन्शी

रामसहाय, रायबहादुर कामतानाथ, भीखू, मुन्शी राधेलाल, ठाकुर गजराजसिंह, सत्यव्रत, अलीरजा, मीर जाफरअली, स्वामी जटेलानंद, अल्लामा नक्शी, रामकिशन, गरीटे, मि. हैरिसन, मेजर, नादिर, प्रेमशंकर, बिन्देश्वरीप्रसाद, सिध्देश्वरीप्रसाद, लाल रिपुदमनसिंह, मीर सखावत हुसेन, मि. फरहतुल्ला आदि । स्त्री पात्रों में छिनकी, यमुना, रुक्मिणी, उषा, मलका, सतवंती, कैलासो, रानी साहिबा घाटबागान, राधा, रुक्मा आदि अविस्मरणीय गौण पात्र हैं । उपन्यास में तीनों वर्गो का चित्रण प्रभावशाली ढंग से हुआ है । उच्च वर्ग के अन्तर्गत आनेवाले पात्रों में जमींदार, महाजन, पूंजीपति, व्यापारी, राजा-रईस आदि आते हैं । मध्यवर्ग में पटवारी, अर्जीनवीस, दरोगा से लेकर डिप्टी कलक्टर तक के अधिकारी, वकील तथा देशभक्त आते हैं, तो पहलवान, पुजारी, पारिवारिक सेवक वर्ग, पिछडे जाति के स्त्री-पुरुष आदि निम्न वर्ग के अन्तर्गत आते हैं ।

यहाँ सब से पहले हम उपन्यास के प्रमुख पात्रों का विश्लेषण करेंगे ।

1) मुन्शी शिवलाल :

मुन्शी शिवलाल उपन्यास में प्रथम पीढ़ी और प्रथम चरित्र के रुप में सामने आते हैं । मुन्शी शिवलाल पटवारी कुन्दनलाल के पुत्र तथा राधेलाल के भाई हैं । अपने पिता के गुण उन्हें विरासत में मिले हैं । वर्माजी उनका वर्णन इन शब्दों में करते हैं - "मुंशी शिवलाल मझोले कद के दुबले - पतले आदमी थे । उम्र करीब पचपन साल, मूँछे छोटी और चुनी हुई जो चितकबरी दीखती थी; चेहरे की बनावट सुन्दर कही जा सकती थी अगर वह चेचकरु न होता ; रंग गेहुँआ, लेकिन मुँह पर चेचक के धब्बों के कारण साँवला दीखता था ।"[4] उनके चरित्र का क्रमिक-विकास इस प्रकार हुआ है -

अर्जीनवीस के रुप में - मुंशी शिवलाल फतहपुर के कलक्टरी की अदालत के हाते में अर्जीनवीस हैं डा. पुष्पा कोछड़ के शब्दों में 'मुंशी शिवलाल टूटती हुई सामन्ती परम्परा और नौकरशाही परम्परा के मिलन बिन्दु पर खडे हैं । वे नोकरशाही सभ्यता की कचहरी में मुंशी हैं । दूसरी ओर वे सामन्ती संस्कार के व्यक्ति हैं । दोनों के गुण-दोषों से बने मुंशी जी हैं'[5] मुन्शी शिवलाल अपनी चाटुकारिता, खुशामद खोरी एवं कलम के बल पर अपने बेटे ज्वालाप्रसाद को नायब तहसीलदार बनाने में सफल होते हैं । वे अपने कलम से झूठे इस्तगासे लिखकर न्यायालय में पेश करते हैं और मुकदमों को उलटा - सीधा कर देते हैं । वे ठाकुर भूपसिंह से कहते हैं, 'अरे ठाकुर, हम हैं मुंशी शिवलाल । अर्जीनवीस हैं तो क्या, बड़े-बड़े वकील - मुख्तार हमसे सलाह माँगने आते हैं । वह

मसौदा तैयार कर दे कि जंट-कलट्टर सब-के-सब चक्कर में पड़ जायें ।[6] अतः मुंशी शिवलाल एक चाटुकार और बेईमान अर्जीनवीस हैं । पिता के रुप में :- मुंशी शिवलाल का एकमात्र पुत्र है ज्वालाप्रसाद । उन्हें इस बात पर गर्व है कि उनका बेटा नायब तहसीलदार है । वे एक नम्बर के स्वार्थी प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं । वे चाहते हैं कि ज्वालाप्रसाद जमीन-जायदाद खड़ी करे । तहसीलदार के खानदान में जमीन-जायदाद होनी चाहिए, ऐसी उनकी धारणा है । अपने भाई राधेलाल के बहकावे में आकर वे ज्वाला को सही-गलत सलाह देते रहते हैं । जैदेई ज्वाला की हर एक बात मानती है यह जानकर उनके मन में लालच पैदा होता है और वे ज्वाला को सलाह देते हुए कहते हैं, "ज्वाला बेटा, तुम्हारी किस्मत खुल गई । बहुत तगड़ा शिकार फँस गया है । अब आगे के लिए कसम खा लो कि तुम इस तरह दूसरों को रुपया न दिलवाओगे । अपने लिए जमीन-जायदाद इकठ्ठा कर लो । लम्बरदारेन जैदेई के पास नकद और जेवर मिलाकर लाखों की जमा-जथा है ।[7]" उसी तरह वे गफूर मियाँ की बेवा सलीमा का मौजा झूठ-फरेब और धोखाधड़ी से ज्वाला के नाम करवाना चाहते हैं किन्तु ज्वाला अपनी ईमानदारी पर कायम रहता है तो वे आवेश में आकर, यह कहते हुए कि, "ले, तेरी ईमानदारी और सचाई पर मैं बलि होता हूँ ।[8] अपने सिर पर भरी हुई सुराही पटक लेते हैं और इसी में उनकी मृत्यु होती है । डा. देवीशंकर अवस्थी ने मुंशी शिवलाल के बारे में लिखा हैं-'मुंशी शिवलाल पटवारियों, अर्जीनवीसों की उस कायस्थ - खोपड़ी के प्रतिनिधि हैं जो नाना प्रकार की तिकड़मों और बेईमानियों के द्वारा स्वार्थ सिध्द करना चाहते हैं । जब उनका पुत्र ही उनके इन ढंगों को अस्वीकार करता है, तो आवेश में आकर वे आत्महत्या कर बैठते हैं ।'[9] अतः शिवलाल का चरित्र एक पिता के रुप में असफल रहा है । वह एक स्वार्थी, लालची और बेईमान किस्म का व्यक्ति है, उसमें धीर-मनोबल का अभाव है ।

अनैतिकता के रुप में - जब ज्वाला चौदह साल का था तब उनकी पत्नी की मृत्यु हुई थी । पत्नी की मृत्यु के बाद उन्होंने दूसरा विवाह नहीं किया, इसका कारण यह भी था कि घसीटे की दूसरी पत्नी छिनकी के साथ उनका अवैध यौन सम्बन्ध स्थापित हो गया था । छिनकी के साथ वे अपनी पत्नी का सा ही व्यवहार करते थे । छिनकी कहार जाति की है किन्तु शिवलाल जाति-पाँति का भेदभाव न मानते हुए उसके हाथ का बनाया, परोसा खाना खाते हैं । राधेलाल द्वारा इस पर आपत्ति उठाने पर वे कहते हैं, "मैं समझता हूँ कि अगर इसने मेरा खाना बना दिया तो उसने कोई पाप नहीं किया, और अगर मैंने इसके हाथ का बनाया खाना खा लिया तो मैंने भी कोई पाप नहीं किया ।"[10] यहां उसके मानवतावादी दृष्टिकोण पर प्रकाश पड़ता हैं ।

मुन्शी शिवलाल छिनकी को बहुत चाहते हैं और अपने पीछे उसका क्या होगा; इसकी

चिन्ता उन्हें खाए जाती है। अपने मृत्यु समय वे छिनकी की जिम्मेदारी ज्वालाप्रसाद पर सौंपते हुए करुणा भरे स्वर में कहते हैं, "यह छिनकी, यह तेरी दूसरी माँ है। मैंने इसे बड़ा कष्ट दिया है; इसकी कोई बात नहीं सुनी मैंने। तो इसे अब तेरी दया पर छोड़ रहा हूँ। तेरी सबसे अधिक सगी यही हैं।"[11] यहाँ छिनकी के प्रति मुन्शी शिवलाल का एकनिष्ठ - प्रेमभाव उमड़ पड़ा है। वे आजीवन छिनकी का निर्वाह करते हैं।

परम्परावादी के रुपमें - मुंशी शिवलाल परम्परावादी हैं। वे घर के मुखिया हैं और सम्मिलित परिवार प्रथामें विश्वास रखते हैं। राधेलाल की पत्नी को ही वे घर की मालकिन समझते हैं। अपने पुत्र ज्वाला में और राधेलाल के पुत्रों में वे अन्तर नहीं मानते। अपने परिवार को वे हमेशा सम्मिलित रखने का प्रयत्न करते हैं किन्तु ज्वाला के नौकरी करने के बाद परिस्थितियाँ ही ऐसी निर्माण होती हैं कि उन्हें अपने परिवार को संगठित रखना असम्भव होता है। डा. अमरसिंह लोधा का यह कथन सही है कि, "सम्मिलित परिवार की मर्यादा - रक्षा में ही शिवलाल के प्राण गये।"[12]

मुन्शी शिवलाल एक आत्मिक सखा भी हैं। घसीले उनका सेवक है। घसीटे उन्हें दारु पिलाने और उनकी अन्य सेवा करने में भी दत्तचित है। मुन्शी शिवलाल उसे अपना मित्र ही मानते थे। जब उसकी मृत्यु होती है तो उन्हें अत्यधिक मानसिक पीड़ा होती है और वे टूट से जाते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि मुंशी शिवलाल का चरित्र सपाट या चौरस अधिक है। उसका चरित्र एक स्वार्थी, बेईमान होने के कारण उपन्यास में उभरकर नहीं आता। वर्माजी ने उसमें किसी विशेष मानवीय गुणों का संचालन नहीं किया है। उसकी सम्भावनाओं का उपयोग लेखक ने लगभग कर भी लिया है किन्तु वह पाठकों के मन में कोई गहरा प्रभाव नहीं छोड़ता। फिर भी वह सामन्तीय जीवन का प्रतिनिधित्व करने में समर्थ है ही। शायद लेखक ने नोकरशाही और पूँजीवाद को गति प्रदान करने के उद्देश्य से ही इस अनैतिक, स्वार्थी और बेईमान सामन्तवादी चरित्र की अस्वाभाविक मृत्यू को लाकर खड़ा कर दिया है और इस चरित्र से छुटकारा पाया है।

2. **उपन्यास का नायक: ज्वालाप्रसाद** :

जहाँ आलोचकों ने उपन्यास के चरित्रों में त्रुटियाँ महसूस की हैं वहीं उपन्यास के नायक के सम्बन्ध में भी मतभेद प्रकट किए हैं। 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास का नायक ज्वालाप्रसाद है। डा. कुसुम वार्ष्णेय ने 'भूले बिसरे चित्र' को 'नायक विहीन उपन्यास' कहा है।[13] डा. त्रिभुवनसिंह ज्वालाप्रसाद को उपन्यास का नायक न मानकर मुंशी शिवलाल से लेकर नवल तक

के एकही कायस्थ परिवार या वंश को उपन्यास का नायक मानते हैं । उनके मतानुसार 'भुले बिसरे चित्र' में एक नायक का अभाव है, पर कालिदास के 'रघुवंश' महाकाव्य की भाँति इस उपन्यास में भी एक वंश को नायकत्व प्रदान कर वर्माजी ने इसे महाकाव्य का गौरव देना चाहा है ।"[14] डा. शांतिस्वरुप गुप्त ज्वालाप्रसाद को उपन्यास का नायक स्वीकार करते हैं किन्तु वे उसे महाकाव्यात्मक नायक मानने से इन्कार करते है । उनका मंतव्य है कि, "केंन्द्र की दृष्टि से ज्वालाप्रसाद उपन्यास का नायक है, पर उसमें महाकाव्यात्मक उपन्यास के नायक की सी उदात्तता और गरिमा नहीं है । वह उपन्यास के अन्त में टूटता है, उसका व्यक्तित्व एक हारे हुए व्यक्ति का अस्तित्व है । पर ज्वालाप्रसाद न 'गोदान' के होरी के समान जीवन-संघर्ष भोगता है, न उसके समान टूटता है । उसके जीवन की परिस्थितियां उसे उलझन में अवश्य डालती हैं । पर न तो वे त्रासदायनी हैं और न ज्वालाप्रसाद उन परिस्थितियों से संघर्ष कर, उनसे ऊपर उठकर अपनी चारित्रिक गरिमा का परिचय देता है ।"[15]

कुछ विद्वानों को 'भूले बिसरे चित्र' 'नायक विहीन' उपन्यास' लगना स्वाभाविक है क्यों कि जिस प्रकार ज्वालाप्रसाद उपन्यास के प्रथम दो खण्डों में कथा का केन्द्रबिन्दु एवं सुत्रधार रहता है, उसके तीसरे और चौथे खण्ड में कथा का सुत्रधार वह नहीं रहता बल्कि उसके स्थान पर गंगाप्रसाद को प्रतिष्ठापित किया गया है । अन्तिम खण्ड में ज्वालाप्रसाद पुनः उपस्थित तो होता है किन्तु उसमें भी नवल ही कथा का अभिन्न भाग बन जाता है । किन्तु ऊपरि तौर पर ही यह भेद दिखाई देता है । सूक्ष्मता से देखने पर यह दिखाई देता हे कि गंगाप्रसाद और नवल से सम्बन्धित जो मूल इतिवृत्त है वह अधिकतर ज्वालाप्रसाद से ही सम्बन्धित है । वर्माजी निष्प्रयोजन ही गंगाप्रसाद और नवल को उपस्थित नहीं करते बल्कि अन्य पात्रों को उपस्थित करके ज्वालाप्रसाद के चरित्र को और उजागर करना और अन्य पात्रों से उसका अन्तर स्पष्ट करना ही उनका उद्देश्य है । अतः ज्वालाप्रसाद ही कथा का केंद्र है; उसके आस-पास ही कथावस्तु का ताना-बाना बुना गया है । इस प्रकार ज्वालाप्रसाद निःसन्देह उपन्यास का केन्द्रबिन्दु और नायक है । वर्माजी ने ज्वालप्रसाद को उपन्यास का आदर्श नायक बनाने की पूरी सम्भावनाओं को उपस्थित किया है । इस सम्बन्ध में डा. देवीशंकर अवस्थी का मत उल्लेखनीय है, उनके मतानुसार - "ज्वालाप्रसाद ही प्रारंभ से अंत तक उपन्यास का मेरुदंड बना रहता है । जब वह कथा का सक्रिय पात्र नहीं रह जाता तब भी बेहद संपृक्त द्रष्टा तो रहता ही है । इस प्रकार उसकी समस्त संभावनाओं एवं क्षमता का उपयोग लेखक ने लगभग कर लिया है ।"[16]

ज्वालाप्रसाद के चारित्रिक विशेषताओं का विश्लेशण इस प्रकार किया जा सकता है -

ईमानदार अफसर :

ज्वालाप्रसाद एक तहसीलदार के रूप में आदर्श और ईमानदार अफसर है । वह चाहता तो उसे ऊपर की आमदनी आसानी से हो सकती थी, किन्तु वह बेहद ईमानदार और अंग्रेज सरकार का वफादार रहने के कारण रिश्वत लेने के खिलाफ है । वह अपनी जिम्मेदारी और ईमानदारी से मीर सखात हुसेन जैसे अपने वरिष्ठ अधिकारियों का विश्वास ग्रहण करता है । मीर सखावत हुसेन उसे अपना दाहिना हाथ समझते हैं । उन्हीं के शब्दों में, "राजा साहेब, बड़ा सुशील और नेक लड़का है यह । यहाँ यह नायब तहसीलदार होकर आया है, लेकिन आप समझ लीजिए कि मेरा दाहिना हाथ बन गया है, समझदार, जिम्मेदार और ईमानदार । मैंने तो इस इलाके का सब काम इस पर छोड़ दिया है, और कहीं से कोई शिकायत नहीं ।"[17] इसी निष्ठा और ईमानदारी की बदौलत ही वह नायब तहसीलदार से डिप्टी - कलक्टर बनकर अवकाश ग्रहण करता है ।

ज्वाला के पिता मुन्शी शिवलाल नाना तिकड़मी चालों से उससे झूठ बुलवाकर जमीन - जायदाद इकठ्ठी करने में हमेशा लगे रहते हैं किन्तु ज्वाला अपने पिता से निर्भयतापूर्वक कहता है - "सबकुछ जानता हूँ, लेकिन सरकार का ऊंचा हाकिम होने के नाते मैं झूठ तो नहीं बोल सकूँगा ।" वह आगे यहाँ तक कहता है कि, "अपनी सचाई और ईमानदारी को मैं आप तो क्या भगवान खुद आकर भी छोड़ने को कहें तो इन्कार कर दूँगा ।"[18] यह ज्वाला के ईमानदार व्यक्तित्व का सर्वोच्च बिन्दु है । ज्वाला अपने पिता की बरसी पर दूसरों से सहायता लेकर अपनी हैसियत से अधिक खर्चा करना नहीं चाहता । उसके सिर्फ कहने भर से सब सामान घर पहुंच सकता था किन्तु स्वाभिमानी ज्वाला अपने पद का नाजायज फायदा कभी नहीं उठाता । वह अपनी हैसियत के अनुसार ब्राह्मण भोजन करवाना ही उचित समझता है ।

लाला प्रभुदयाल और बरजोरसिंह के संघर्ष में प्रभुदयाल का खून होने पर ज्वाला बरजोरसिंह के खिलाफ जिला न्यायाधिपति के सामने अपना सच्चा बयान दे देता है, तब गजराजसिंह उसे इस मामले में मौन रहने की सलाह देते हैं, तो ज्वाला उन्हें स्पष्ट जबाब दे देता है - "क्या मैं एक हत्यारे को अपने मौन से बचाकर इन्साफ और कानून का गला घुटने दूँ ? क्या इन्साफ के मार्ग में बाधक बनकर मैं इस ब्रिटिश सरकार के साथ विश्वासघात करूँ ?"[19] इस प्रकार ज्वालाप्रसाद के आत्मा की पुकार है - इन्साफ और ईमानदारी, अपनी आत्मा के विपरित वह कोई काम नहीं करता ।

ज्वालाप्रसाद जहाँ स्वाभिमानी और ईमानदार व्यक्ति सम्पन्न चरित्र है, वहाँ उसमें कुछ त्रुटियाँ परिलक्षित होती हैं जो उसके चरित्र की दृष्टि से स्वाभाविक नहीं लगती। वह प्रभुदयाल द्वारा भेजी गई सौगात जिनमें रूपयों का भी समावेश है, भीखू और यमुना के कहने पर अस्वीकार नहीं कर पाता। उसी प्रकार जैदेई द्वारा अपने इकलौते पुत्र गंगाप्रसाद की पढ़ाई पूरी करवाता है। ये बातें ईमानदार और स्वाभिमानी ज्वाला के लिए नितांत अजीब सी लगती हैं। किन्तु इन्हें स्वीकार करने के पीछे उसकी विवशता है। वह जानबूझकर यह सब नहीं करता। उसके सामने परिस्थितियाँ ही ऐसी उपस्थित होती हैं कि उसे इसका स्वीकार करना पड़ता है। किन्तु ये कारण भी निर्बल हैं; इससे इसके ईमानदार चरित्र में कोई बहुत बड़ा दोष उत्पन्न नहीं हो सकता। अतः स्पष्ट रूप से ज्वालाप्रसाद एक ईमानदार, स्वाभिमानी और एकनिष्ठ व्यक्तित्व से परिपूर्ण चरित्र है, इसमें दो मत सम्भव नहीं हैं।

अनैतिकता के रूप में :

बारह वर्ष की आयु में ज्वालाप्रसाद का विवाह रामसहाय की बेटी यमुना के साथ हुआ था। नायब तहसीलदार बनने पर ज्वालाप्रसाद अपनी पत्नी के साथ घाटमपुर चला जाता है। वहाँ अनायास ही प्रभुदयाल और उसकी पत्नी जैदेई के साथ उनका परिचय होता है और प्रभुदयाल की मृत्यु के पश्चात ज्वालाप्रसाद और जैदेई के बीच घनिष्ठ यौन सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। ज्वालाप्रसाद गंगाप्रसाद की तरह बलपूर्वक यह सम्बन्ध स्थापित नहीं करते बल्कि जैदेई की प्रेरणा से ही उसके साथ यौन सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। यह एक संयोग ही कहा जा सकता है। जब वे होली के दिन जैदेई के घर जाते हैं तो उनके मन में ऐसी कोई भावना नहीं थीं, किन्तु जैदेई के आमंत्रण को वे अस्वीकार नहीं कर सकते थे। जब वे उसके घर से सौ अशर्फियों की थैली लेकर वापस लोटते हैं, तो अपने आप को अपराधी महसूस करते हैं। इस प्रसंग में लेखक ने उनके अन्तर्द्वन्द्व का वर्णन इन शब्दों में किया है - "फाटक के राधा-किशन के मन्दिर के पट खुल गए थे और आरती हो रही थी। ज्वालाप्रसाद को भगवान के दर्शन करने की हिम्मत नहीं हुई। उनको ऐसा लगा कि वे नौकर उन पर हँस रहे हों, व्यंग्य कर रहे हों। उनके हाथ में अशर्फियों की थैली थी और उनके पैर लड़खड़ा रहे थे। एक जलन-सी भरी हुई थी उनके मन में, उनकी आँखों में, उनके शरीर में।"[20]

ज्वालाप्रसाद यमुना और जैदेई का आजीवन निर्वाह करते हैं। ज्वालाप्रसाद-जैदेई का यह अवैध सम्बन्ध ऊपरी तौर पर शिवलाल-छिनकी जैसा दिखाई देने पर भी भिन्न प्रकार का है। वे

वे एक दूसरे को भौजी-देवर कहते हुए भी एक दूसरे से यौन सम्बन्ध रखते हैं। यहाँ वर्माजी ने सामाजिक नैतिकता को धक्का दिया है। लेखक ने ज्वालाप्रसाद को पूर्ण आदर्श एवं नैतिक बनाने का प्रयास तो किया है किन्तु यहाँ ज्वालाप्रसाद की अनैतिकता छुपी नहीं रहती।

पूँजीवादी विचारधारा का समर्थक :

वर्माजी ने ज्वालाप्रसाद को टूटती सामन्ती परम्परा और पूँजीवाद के उदय एवं विकास के मिलन बिन्दु पर प्रतिष्ठापित किया है। प्रभुदयाल और बरजोरसिंह के संघर्ष में ज्वालाप्रसाद का समर्थन उभरते हुए पूँजीपति प्रभुदयाल की ओर ही अधिक रहता है। पूँजीपति लक्ष्मीचन्द के विचारों का समर्थन करते हुए वह अपने पिता से कहते हैं - "बप्पा, यह नया जमाना है। कोई खुद बढ़ईगीरी थोडे ही करनी है। वह तो लकड़ी के काम का कारखाना खोलेगा। सैकड़ों बढ़ई वहाँ नौकर होंगे। मशीन की मदद से काम होगा। अच्छे-से अच्छा नये फैशन का सामान बनेगा। लाखों का काम-काज हो सकता है। नई दुनिया का नया रुप होगा।"[21] उनके ये शब्द पूँजीवादी विचारधारा को उजागर करते हैं, अतः ज्वालाप्रसाद पूँजीवाद का समर्थक है।

आदर्शवादी :

ज्वालाप्रसाद एक पुत्र, भतीजा, पिता, पितामह और सेवक आदि भूमिकाओं में अपना आदर्शवादी दृष्टिकोण सामने रखता है। तहसीलदार बनने पर वह अपने पिता को बराबर रुपये भेजता रहता है। पिता के कहने पर बरजोरसिंह की बेवा को उसकी जमीन जैदेई द्वारा वापस दिलवाता है। अपने पिता का वचन पालन करते हुए वह छिनकी को उसके जीवन पर्यंत अपनी माँ समान मानकर सेवा करता है। वह एक जिम्मेदार और ईमानदार अफसर है, तभी तो वह तहसीलदार से डिप्टी कलक्टर बनकर अवकाश प्राप्त करता है। अपने पुत्र नवल की अनैतिकता, फिजूलखर्ची और उसके मानसिक भटकाव को देख वह तिलमिला उठता है और परिवार के साथ जौनपुर जाकर गंगाप्रसाद को काफी हद तक सही रास्ते पर ले आता है। उसके जीवन काल में ही उसके पुत्र की मृत्यु होती है, जैदेई की मृत्यु होती है, छिनकी चली जाती है और उनके दुःख की साझीदार यमुना भी उन्हें हमेशा के लिए छोड़ जाती है। इन घटनाओं से उनके दिल को बहुत बड़ा सदमा पहुँचता है, परन्तु इन विपरीत परिस्थितियों में भी संघर्ष करते हुए वह अपने-आप को सम्भालते हैं और अपने परिवार के प्रति अपना उ-तरदायित्व अन्त तक निभाते हैं। अपनी पोती विद्या का विवाह वे खुद तबाह होकर करते हैं। इस प्रकार ज्वाला सच्चाई के रास्ते पर चलनेवाला आदर्श राही है।

परंपरावादी एवं नियतिवादी :

'भूले बिसरे चित्र' मानव जीवन की टूटती परम्पराओं और बदलती मान्यताओं का इतिहास प्रस्तुत करता है। ज्वालाप्रसाद इस परिवर्तित परिस्थिति का गवाह है। उसकी अपनी मान्यताएँ हैं जिसने सामन्तवाद को टूटते और पूँजीवाद के उदय और विकास को देखा है। वह पुरानी परम्परा में विश्वास करता है और उसी का समर्थन करता है। वह तत्कालीन उभरते हुए मध्य वर्गीय नौकरशाही का प्रतिनिधित्व करता है। वह अपने पिता की बरसी पर ब्राह्मण भोजन करवाता है। अपने बहू के बच्चा जनने के समय लेडी डाक्टर को बुलाने के बजाय किसी दाई को बुलाता है। अपनी पोती विद्या का विवाह दहेज देकर करता है। वह विद्या को आगे पढ़ाने और नौकरी करवाने के खिलाफ है। 'नारी शिक्षा सदन' में विद्या की नौकरी पक्की होने पर वह निराश भाव से कहता है - "यह दिन भी देखना बदा था। घर की लड़की घर से निकलकर नौकरी करे, दूसरों की गुलाम बने।"[22] उसी तरह नवल का नमक सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेकर उसका जेल जाना ज्वाला को अजीब सा लगता है।

जहाँ एक ओर ज्वाला परम्परा का गुलाम है वहाँ दूसरी ओर नियतिवादी भी है। वह अपनी गलतियों, असफलताओं को नियति का विधान समझकर अपने भाग्य को ही कोसता रहता है। अतः ज्वालाप्रसाद परंपरावादी एवं नियतिवादी है।

क्रान्तिकारी चेतना के संदर्भ में :

नवलकिशोर के आते-आते देश की राजनीतिक चेतना जोर पकड़ रही थी और देश की जनता नवीन विचारधारा से प्रभावित हो रही थी। गांधीजी के नेतृत्व में देश की जनता संगठिक होकर अंग्रेज सरकार से अपने अधिकारों की माँग कर रही थी; उसके लिए संघर्ष कर रही थी। किन्तु ज्वाला को इससे कोई सरोकार नहीं था। "सड़सठ साल का बूढ़ा आदमी, चेहरा झुर्रियों से भरा हुआ ----- न जाने कितने उतार-चढाव देखे थे उस व्यक्ति ने।"[23] किन्तु दुनिया का यह बदला हुआ रुप उसे अजीब सा लगता है।

ज्वालाप्रसाद स्वतंत्रता आन्दोलन से दूर और तटस्थ ही रहता है। ज्ञानप्रकाश उनके सामने कांग्रेस में सक्रिय भाग लेने का प्रस्ताव रखते हैं तो वह कहता है -, "ना भाई, मेरी पेंशन बरकरार रहने दो। ये राजनीतिक हलचलें उठेंगी और खत्म हो जाएँगी, लेकिन यह ब्रिटिश सरकार वैसी - की - वैसी कायम रहेगी। मैं अपनी पेंशन से क्यों हाथ धोऊँ ?"[24] यहाँ ज्वाला की अपने देश के प्रति निराशा की भावना दिखाई देती है। नवल का कांग्रेसी बनना और सत्याग्रह आन्दोलन में सक्रिय भाग लेना उन्हें पसन्द नहीं है। उसके नमक सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेते देख वह

मर्माहत और निराश होकर भीखू से कहता है, "नहीं समझ में आ रहा है, भीखू, यह सब क्या हो रहा है और क्यों हो रहा है। ये तरह-तरह के चित्र आप-ही-आप बनते हैं और मिट जाते हैं; यह क्यों ?"[25] और क्रान्तिकारी चेतना को समझ न पाने के कारण ज्वालाप्रसाद अन्त में टूट जाता है। ज्वालाप्रसाद और भीखू दोनों की विवशता, आन्तरिक पीड़ा को वर्माजी ने अत्यंत मार्मिक शब्दों में उपन्यास के अन्त में प्रतुत किया है - "दो बूढ़े, जिन्होंने युग देखा था, जिन्दगी के अनेक उतार-चढ़ाव देखे थे जिन्होंने, जिनके पास अनुभवों का भण्डार था, विवश थे, निरु-तर थे।"[26]

डा. शंकर मुदगल ज्वालाप्रसाद को उदा-त एवं गरिमामय चरित्र घोषित करते हुए लिखते हैं, "ज्वालाप्रसाद का चरित्र निःसंशय उदा-त एवं गरिमामय है। ज्वाला का संघर्ष बाहरी न होकर आंतरिक है और आंतरिक संघर्ष की चरमसीमा उसके व्यक्तित्व में स्पष्ट दिखाई देती है। उपन्यास के अन्त में उसका टूटना स्वाभाविक है और उसका टूटना पाठकों के मन में गहरा और उदा-त अवसाद पैदा कर देता है।"[27]

ज्वालाप्रसाद के चरित्र में चारित्रिक उदारता है किन्तु उसमें अपेक्षाकृत गहराई परिलक्षित नहीं होती। लेखक ने उसे संघर्षो में अवश्य उलझाए रखा है किन्तु अधिकतर संघर्ष ज्वालाप्रसाद के अपनी ही परम्परा और मान्यताओं को घसीटते रहने की वजह से उपस्थित हुए हैं और वे संघर्ष इतने बोझिल भी नहीं हैं कि उससे उसका चरित्र मानवीय परिधि से ऊपर उठ सके। ज्वालाप्रसाद में कुछ कमजोरियाँ भी हैं। वह अनैतिक सम्बन्ध भी रखता है और अपनी ही परम्परा को आगे घसीटता रहता है। किन्तु इसके बावजूद भी ज्वाला समस्त मानवीय सम्भावनाओं को उजागर करने में समर्थ रहा है। कुल मिलाकर ज्वालाप्रसाद उपन्यास का केन्द्रबिन्दु है। उसमें महाकाव्यात्मक नायकत्व की सी गरिमा का अभाव है, फिर भी 'भूले बिसरे चित्र' का वह सजीव, समर्थ, निष्ठावान पात्र तथा उपन्यास का नायक है। उपन्यास में वह पूँजीवादी परम्परा और नौकरशाही परम्परा का प्रतिनिधित्व करता है।

(3) <u>गंगाप्रसाद</u> :

गंगाप्रसाद उपन्यास में तीसरी पीढ़ी के रुप में आता है। वह ज्वालाप्रसाद का इकलौता पुत्र तथा मध्य-वर्गीय नौकरशाही परम्परा का चरमोत्कर्ष है। उसकी चारित्रिक विशेषताएँ निम्नांकित रुपों में देखी जा सकती हैं -

<u>छात्र के रुप में</u> :

गंगाप्रसाद एक अध्ययनशील एवं बुध्दिमान छात्र है। वह स्कूल में हमेशा दूसरे नम्बर में आता है, किन्तु इससे उसका समाधान नहीं होता। वह स्कूल में अव्वल नम्बर में आना चाहता है।

एक स्थान पर वह भीखू से कहता है - "नहीं भीखू काका, अब की दफा हमें दरजा में अव्वल आना है। चार नम्बर से हम दूसरे हो गए। इस दफा हमें कोई नहीं पछाड़ सकता।"[28] इस प्रकार लेखक ने गंगाप्रसाद के भावी जिद्दी तथा ईर्षालु प्रवृ-ित का स्वाभाविक विकास उसके शिशु अवस्था से ही कराया है। यहाँ पाठक गंगाप्रसाद की भावी सम्भावनाओं से परिचित होता है। अपने परिश्रम, लगन एवं बुध्दिम-ता की बदौलत ही वह 'बी.ए.' उ-तीर्ण करता है और अपनी योग्यता तथा ज्वालाप्रसाद की खुशामद से वह डिप्टी कलक्टर और अन्त में कलक्टर बन जाता है। पढ़ाई के साथ - साथ खेल-कूद में भी उसकी रुचि है। वह इलाहाबाद के म्योर सेन्ट्रल कालेज का सबसे अधिक प्रख्यात खिलाड़ी था। क्रिकेट और टेनिस इन दो खेलों में उसकी अखिलभारतीय ख्याति थी। अतः गंगाप्रसाद का चरित्र एक आदर्श छात्र के रुप में सराहयनीय है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

पुत्र के रुप मे :

एक आदर्श पुत्र के रुप में भी गंगाप्रसाद का चरित्र उल्लेखनीय है। वह कभी अपने पिता का विरोध नहीं करता। जैदेई उसे अपना ही पुत्र मानती है। वह उसकी पढ़ाई - लिखाई और पालन-पोषण का प्रबन्ध खुद करती है। वह भी जैदेई को अपनी माँ से बढ़कर जानता था। एक स्थान पर वह भावुकतावश जैदेई से कहता है, "चाची! तुम मेरी माँ से बढ़कर हो! कितनी ममता तुमने मुझे दी है! कितना प्यार मुझे तुमसे मिला!"[29] जैदेई और गंगाप्रसाद में वात्सल्य का भाव है। जैदेई मरने से पहले अपनी समस्त पूँजी गंगाप्रसाद को देना चाहती है। ऐसी ममतामयी देवी को कोई गाली दे; गंगा यह कदापि बर्दाश्त नहीं करता। जब जैदेई का ही पुत्र लक्ष्मीचन्द अपनी माँ को हरामजादी कहकर गाली देता है तो वह उस पर टूट पड़ता है, अतः वह एक आदर्श पुत्र सिध्द होता है।

पति के रुप में :

गंगाप्रसाद की पत्नी रुक्मिणी उसके साथ अन्त तक एकनिष्ठ रहती है किन्तु चंचल स्वभाव के गंगाप्रसाद में एकनिष्ठता, स्थिरता तथा संयम का अभाव है। गंगाप्रसाद कभी वेश्या मलका को रखैल बनाता है, तो कभी रानी सतवंती के साथ घनिष्ठ यौन सम्बन्ध स्थापित करता है। इस तरह वह एक पति के रुप में अपना उ-तरदायित्व निभाने में असफल रहा है। पराई स्त्रियों के साथ अनैतिक यौन सम्बन्ध रखने के कारण गंगाप्रसाद का चरित्र पाठकों के मन से गिर गया है।

ईमानदार अफसर के रूप में :

गंगाप्रसाद में चाहे सौ बुराइयाँ हों लेकिन एक जिम्मेदार अफसर के रूप में वह एक ईमानदार सेवक है । गंगाप्रसाद मध्य - वर्ग के उत्थान और नौकरशाही परम्परा के चरमोत्कर्ष का प्रतीक है । वह अपनी योग्यता से डिप्टी कलक्टर से कलक्टर बनता है । पाश्चिमात्य सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभाविन गंगाप्रसाद अंग्रेज और अपने में अन्तर नहीं मानता; अपने उच्च अधिकारियोंके साथ वह बराबर मिलता - जुलता है और उनका विश्वास प्राप्त करता है । इसी ईमानदारी और एकनिष्ठता के कारण उसे दिल्ली दरबार के इन्तजाम के लिए भेजा जाता है । ज्वालाप्रसाद की तरह वह भी अंग्रेज सरकार से एकनिष्ठ है, वह रिश्वत नहीं लेता और सरकार विरोधी कोई कार्य भी नहीं करता । जब ज्ञानप्रकाश उसे अमृतसर कांग्रेस अधिवेशनमें चलने को कहते हैं तो वह साफ इन्कार कर देता है ।

गंगाप्रसाद के कलक्टर बनते - बनते देश में अंग्रेजी शासन के खिलाफ असंतोष भड़क उठा था । जगह - जगह हड़तालें, जुलूस निकाले जाते थे । सरकार ने जौनपुर में दंगल को दबाने की जिम्मेदारी गंगाप्रसाद को सौंप दी थी और वह निर्दयतापूर्वक अपनी जिम्मेदारी निभाकर सरकार को अपनी वफादारी का सबूत पेश करता है । ऐसे अनेक दंगे - फसादों को वह नाकाम बना देता है । सरकार के कहने पर वह अपने ही देशवासियों पर निर्दयतापूर्वक अन्याय - अत्याचार करता रहता है । यहाँ उसका चरित्र एक ईमानदार अफसर के रूप में तो उभरकर सामने आया है किन्तु मानवतावादी दृष्टि से गिर गया है ।

गंगाप्रसाद हमेशा अपनी तरक्की चाहता है परन्तु उसके वफादारी और एकनिष्ठता के बावजूद भी उसे तरक्की से वंचित रखा जाता है, जब कि उससे कम तजुर्बेकार अंग्रेज नौकरी में दाखिल होते ही उसके वरिष्ठ अफसर बन जाते हैं । एक स्थान पर अपनी विडम्बना को स्पष्ट करते हुए वह कहता है - "अंग्रेज लौंडा भी आते ही मेरा अफसर बन कर बैठ जाता है और मुझ पर धौंस जमाने लगता है ।"[30] उसपर हमेशा अन्याय होता रहता है, जब आन्दोलन समाप्त होता है तो उसे दूध की मक्खी की तरह उठाकर फेंक दिया जाता है । साथ ही मि. हेरिसन जैसे उच्च अंग्रेजों से मुँह लगने के कारण उसका हमेशा तबादला होता रहता है । इसके कारण वह एक बार अपनी नौकरी और गुलामी से विद्रोह करता है किन्तु मुल्तान में हुई हिन्दू - मुस्लिम दंगे की खबर सुनकर उसकी आन्तरिक कायर चेतना जाग उठती है और वह अपना इस्तीफा फाड़ डालता है अतः गंगाप्रसाद एक ईमानदार किन्तु अमानवीय जिम्मेदार अफसर है, उसमें दृढ मनोबल का अभाव दिखाई देता है ।

स्वतंत्रता आन्दोलन और गंगाप्रसाद :

ज्वालाप्रसाद की तरह गंगाप्रसाद भी स्वतंत्रता आन्दोलन से दूर ही रहता है । अपने देश की आजादी से भी वह अपनी तरक्की को ही अधिक महत्व देता है । जब ज्ञानप्रकाश उसे अमृतसर - कांग्रेस अधिवेशन में चलने को कहते हैं, तो वह कहता है, "होश में तो हो चचा ! मुझे अमृतसर - कांग्रेस में चलने को कहते हो ? सरकार तक अगर खबर पहुँच गई तो कुछ तरक्की - वरक्की होनेवाली है, वह सब समझ लो हमेशा के लिए रूक गई ।"[31] गंगाप्रसाद सरकार के खिलाफ जो भी आन्दोलन किए जाएँगे, उन्हे दबाना ही अपना कर्तव्य समझता है । एक स्थान पर वह ज्ञानप्रकाश को सलाह देता है, "चचाजान, अगर मेरी मानो तो इस कांग्रेस - वांग्रेस से दूर ही रहो; इसमें कुठ है नहीं ।"[32] वह क्रान्तिकारी दंगो, हड़तालों और जुलुसों को बड़ी बेरहमी से कुचलने में कामयाब होता है । किन्तु जहाँ वह कॉंग्रेस की राजनीति का विरोध करता है, वहाँ दूसरी और महात्मा गांधी जैसे महापुरूषों का सम्मान भी किया करता है । वह मि. हैरिसन को मुँहतोड जवाब देते हुए कहता है, "मिस्टर हैरिसन, यह तुम्हारा कमीनापन और लुच्चापन है, जो तुम उस महापुरूष को गालियाँ दे रहे हो । हम लोक उसकी राजनीति से भले ही सहमत न हो, लेकिन उसकी महत्ता, इमानदारी और शराफत से कोई इन्कार नहीं कर सकता ।"[33] यहाँ उसकी निड़रता, और स्पष्ट मतवादी व्यक्तित्व का परिचय मिलता है । वह अपनी गु लामी और अपमान से विद्रोह करके अपने नौकरी से इस्तीफा देकर कांग्रेस में सक्रिय हिस्सा लेना चाहता है, इससे स्पष्ट होता है कि गंगाप्रसाद में देश-प्रेम की भावना का अभाव नहीं था, किन्तु वह उसमें अस्थायी रूप में ही विद्यमान रहती हैं । उनके प्रस्फुटित होने के लिए उसके जीवन में ऐसी परिस्थितियाँ भी उत्पन्न होती हैं कि जिससे प्रभवित हो वह देश-सेवा करता और आदर्श देशभक्त कहलाया जाता, किन्तु उसकी कायरता उसके अन्दर की सब से बड़ी कमजोरी बन जाती है । अपने दृढ मनोबल के अभाव के कारण वह देश-सेवा में अपना योगदान नहीं दे पाता और इसी कारण अपने जीवन में भी भयानक रूप से असफल हो जाता है । लेखक ने उसे देशभक्ति से वंचित ही रखा है, शायद उन्हें यह स्थान अपनी पीढ़ी के नवल को ही देना था । हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उपन्यास के पात्र अलग - अलग वर्ग के प्रतिनिधी पात्र हैं और गंगाप्रसाद नौकरशाही परम्परा का प्रतिनिधी है ।

पिता के रूप में :

गंगाप्रसाद को एक पुत्र और तीन लड़कियाँ हैं । वह नवल को आई.सी.एस. बनवाने के लिए इंग्लैंड भेजना चाहता है । गंगाप्रसाद चाहता है कि उसके टूटने से पहले नवल बन जाए विद्या का विवाह वह पन्द्रह हजार रूपए दहेज के एवज में सिध्देश्वरी के साथ तय करता है । अपने बच्चों के प्रति उसके दिल में ममता - मोह है, किन्तु उनके लिए वह कुछ नहीं कर पाता। अपनी फिजूलखर्ची आदतों की वजहसे वह अपने बच्चों के लिए कुछ रूपये भी बचा नहीं पाता और अन्त में टूट जाता है । अपनी गलती को स्वीकार करते हुए वह नवल से कहता है - "नवल, जानते हो मैं क्यों टूटा और कैसे टूटा ? तुम ताज्जुब करोगे यह जानकर कि अपने को तोड़ने वाला स्वयं मैं हूँ । मेरे अन्दर वाली कायरता और उस कायरता की घुटन ने मुझे तोड़ दिया है ।"[34] और वह चाहता है कि नवल ऐसी गलती न करे इसलिए वह नवल से कहता है, "तुम भगवान को छोडकर किसी से दबना मत, तुम अपनी आत्मा की पुकार के विरूध्द कोई काम मत करना और तुम अपने को भूलने के लिए कभी शराब मत पीना ।"[35] कुल मिलाकर वह एक असफल और विवश पिता है ।

निरंकुशता के रूप में :

मुन्शी शिवलाल के परिवार में गंगाप्रसाद के आते-आते यौन नैतिकता में काफी परिवर्तन न हो गया था । डा.महावीरमल लोढ़ा के शब्दों में, "पारिवारिक उत्तराधिकार में प्राप्त इस पर - स्त्री - गमन और अनैतिक यौन संबंधों का उन्होंने (शिवलाल, ज्वाला) आजीवन निर्वाह किया था, पर मुक्त बिहारी गंगाप्रसाद में वैसी स्थिरता नहीं थी । गंगाप्रसाद ने दिल्ली के जौहरी राधाकिशन की सुन्दर पत्नी संतो या सतवंती और मलका नामक वेश्या से भी घनिष्ठ यौन - सम्बन्ध स्थापित किया था ।"[36] गंगाप्रसाद के डिप्टी कलक्टर बनने पर उस का किसी बात पर अंकुश नहीं रहता । वेश्यागमन के साथ - साथ वह फिजूल खर्ची, क्लब जीवन से भी बुरी तरह से जुड़ा रहता है । आपत्तियों से लडकर जीवन पर मात करने की बजाय खुद को शराब के नशे में डुबो देता है । उसकी धारणा है कि, "यह जिंदगी का रास्ता ही बरबादी का है । आखिर में हम सबको हासिल होती है मौत । ऐसी हालत में आगे क्या होगा, यह सोचना - विचारना ही बेकार है । आज जो कुछ है वही सच है; कल क्या होगा, न इसे कोई जानता है, और न इस पर सोचने - विचारने से कोई फायदा है ।"[37] गंगाप्रसाद को भविष्य की चिन्ता नहीं, वर्तमान की

वास्तविकता को भोगना यही उसका जीवन-दर्शन है । यहाँ गंगाप्रसाद के सम्बन्ध में डा. शंकर मुदगल का मत उल्लेखनीय है, उनके मतानुसार "गंगाप्रसाद के चरित्र में अनेक कमजोरियाँ हैं । वह दृढ़ मनोबल का व्यक्ति नहीं है । जीवन को वह चुनौती मानकर उसका मुकाबला नहीं करता बल्कि जीवन को पहेली मानकर उसमें फंसता है । आपत्तियों से लड़कर वह जीवन पर मात नहीं करता बल्कि आत्म पीड़न में सुख मानता है । उसी में उसके जीवन का अन्त होता है ।"[38]

अंग्रेजी सभ्यता से प्रभावित और पुरानी परम्परा को तोड़नेवाला गंगाप्रसाद गेंदालाल जैसे चमार जाति के युवक को अपने घर से अपमानित कर निकाल देता है, यहाँ उसका चरित्र अत्यंत घिनौना और भद्दा लगता है । अपनी मानसिक चंचलता और दृढ मनोबल की अस्थिरता के कारण गंगाप्रसाद अपने जीवन में नेकी और बदी का अन्तर्भेद नहीं कर सका, जिसके कारण वह अपने जीवन में भयानक रूप से असफल रहा । डा.पुष्पा कोछड का यह मत सही है कि, "ज्वालाप्रसाद का बेटा गंगाप्रसाद डिप्टी कलक्टर होकर ज्वालाप्रसाद के जीवनकाल में ही अपनी कतिपय खानदानी बुराईयों के कारण जो उसमें अतिशय हो गयी थीं, जीवन खो बैठता है ।"[39]

गंगाप्रसाद में और एक विशेषता पाई जाती हैं; वह साहसी और निड़र भी है । अपने वरिष्ट अफसरों और उच्च अंग्रेजों से वह बे-झिझक मिलता रहता है । वह अपनी जान की बाजी लगाकर माया शर्मा को अलीरजा के कैद से मुक्त कराता है । उसी तरह नायक जति की रुक्मा को भी अल्लामा वहशी के चंगुल से निकालने का साहसी प्रयत्न करता है । कुल मिलाकर गंगाप्रसाद का चरित्र दिशाहीन तथा निरंकुश है । उसके चरित्र में सौ बुराईयाँ हैं, फिर भी वह उपन्यास का सजीव और यथार्थ चरित्र है । वह तत्कालीन नौकरशाही परम्परा का प्रतिनिधित्व करता है । उसकी असामायिक मृत्यु से पाठकों के मन में करुणा उमड़ती है । उसकी मृत्यु से अन्य पात्र उजागर होते हैं ।

(4) नवलकिशोर :

नवल मुंशी शिवलाल के चौथे पीढ़ी का प्रतिनिधि बनकर आता है । गंगाप्रसाद का पुत्र नवलकिशोर टूटती हुई नौकरशाही परम्परा और बदलती हुई सामजिक, राजनीतिक मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करता है । लेखक ने उसका चरित्र आदर्श की कसौटी पर कसा है । उसका चारित्रिक विकास निम्नांकित रुपों में किया जा सकता है -

आदर्श पुत्र :

नवल गंगाप्रसाद का पुत्र और ज्वालाप्रसाद का पोता है । रायबहादुर कामतानाथ के साथ विदेश जाने के लिए वह अपने पिता की इजाजत लेना चाहता है । गंगाप्रसाद टी.बी.के संक्रामक बीमारी से ग्रस्त रहता है, ऐसी हालत में वह अपने पिता को छोड़कर विदेश जाना उचित नहीं समझता । वह इंग्लैंड जाकर आई.सी.एस. बनने के अलावा अपने पिता के साथ भुवाली जाकर उनकी सेवा करना अधिक उचित समझता है । उसके दिल में अपने माता-पिता और बुजुर्गों के प्रति ममता-मोह और आत्मिकता है । रायबहादुर कामतानाथ नवल को गंगाप्रसाद के साथ संक्रामक बीमारी से ग्रस्त, भुवाली के वातावरण में जाने से रोकते हैं, तो वह मर्माहत होकर सोचता है, "उसके पिता का साथ कौन देगा, यदि उस पिता का पुत्र ही उसका साथ देने से इन्कार कर दे ।" और वह टूटे हुए स्वर में कामतानाथ से कहता है, "पापा, मैं अपने पिता से अलग रहूँ, आप यह कहते हैं,? यह जघन्य पाप करने की सलाह आप मुझे दे रहे हैं? फिर दुनिया में कोई भी अपना-पराया न रह जाएगा; फिर तो यह दुनिया दुनिय न रहकर नरक बन जाएगी । नहीं यह सब नहीं होगा, आखिर तक मैं बाबूजी का साथ दूँगा ।"[40] अतः नवल एक मानवतावादी, भावनाशील आदर्श पुत्र है ।

स्वाभिमानी युवक :

नवल एक स्वाभिमानी युवक है, वह नौकरशाही परम्परा से विद्रोह करता है । नवल आई.सी.एस. और एल.एल.बी. को छोड़ देश की राजनीतिक चेतना से प्रभावित हो स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेता है । झूठ, बेईमानी और मक्कारी ये गुण ही उसके व्यक्तित्व में नहीं हैं इसलिए वह एल.एल.बी. छोड़ देता है, उसी के शब्दों में - "इस वकालत में मुझे सफलता नहीं मिलेगी, मुझे ऐसा लगने लगा है । झूठ, खुशामद, मक्कारी वकालत के लिए ये आवश्यक गुण हैं, जो मुझमें मौजूद नहीं । मेरे लिए वकालत से दूर रहना ही अच्छा होगा ।"[41] किसी की गुलामी करना उसे कदापि पसन्द नहीं इसलिए वह कामतानाथ के ऐश्वर्य को ठुकरा देता है । गंगाप्रसाद के ये शब्द उसके स्वाभिमानी चरित्र पर प्रकाश डालते हैं - "आज मैंने देखा कि तुम स्वाभिमानी हो और समर्थ हो, तुम सुविधाओं को ठुकरा सकते हो, तुम मुसीबतों का पहाड़ सिर पर उठा सकते हो ।"[42]

आदर्श भाई :

गंगाप्रसाद विद्या के शादी पर पन्द्रह हजार रुपए दहेज देने का करार कर गये थे । गंगाप्रसाद जो भी तय कर गया है वह उसके लिए पत्थर की लकीर है । नवल विद्या का विवाह

अपने पिता के दिए हुए वचन के अनुसार कर देता है । विद्या को 'बी.ए.' उत्तीर्ण करवाता है और विद्या को दिए हुए वचन का भी पालन करता है । नवल विद्या को हमेशा खुश देखना चाहता है, वह उसके हर दुःख-सुख में साथी बनता है, उसे नौकरी दिलवाने में भी प्रयत्न करता है । इस प्रकार नवल विद्या की हर इच्छा पूर्ति करता है । अतः नवल एक आदर्श भाई है ।

प्रेमी के रूप में :

रायबहादुर कामतानाथ की बेटी उषा, नवल की प्रेमिका और मंगेतर भी है । वे एक दूसरे को बहुत चाहते हैं किन्तु आगे चलकर दोनों की मान्यताओं में अन्तर निर्माण होता है और वे एक दूसरे से दूर-दूर जाने लगते हैं । उषा चाहती है कि नवल 'आई.सी.एस.' करके बड़ा आदमी बने परन्तु नवल का दृष्टिकोण है कि कैरियर आदमी के जीवन में ममता और भावना से बढ़कर नहीं होता । नवल उषा से विवाह तो करना चाहता है किन्तु उसके बदले में वह कुछ पाना नहीं चाहता बल्कि उषा नवल का प्यार पाना चाहती है, उसका संघर्ष नहीं । इसीलिए नवल नमक सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेने से पहले उषा से अपने सारे संबंध तोड आता है । वह अपने दिल पर पत्थर रखकर उषा से कहता है, "नहीं उषा, मैं तुमसे हमेशा के लिए विदा लेने, और तुम्हें अपनी शुभकामनाएँ अर्पित करने आया था । अब शायद हम लोग फिर न मिलेंगे ।"[43] ये शब्द कहते हुए उसके दिल को कितना कष्ट हुआ होगा इसका हम अनुमान ही लगा सकते हैं । नवल उससे हमेशा के लिए विदा लेते हुए भी उसे अपनी शुभकामनाएँ दे देता है । अतः एक प्रेमी के रूप में भी नवल का चरित्र उल्लेखनीय है ।

परम्परा का विरोधी :

नवल का परम्परा का विरोध करना स्वाभाविक ही है क्यों कि वह आधुनिक-विचारधारा से प्रभावित नवयुवक है । स्त्री के प्रति जो परम्परागत धारणा थी, उसका नवल खंड़न करता है और उसके प्रति उदात्त भावना का मंडन करता है । एक तो वह विद्या के नौकरी करने का समर्थन करता है, तो दूसरी ओर राजेन्द्रकिशोर का, पत्नी के होते हुए भी दूसरा विवाह करना, इसका वह विरोध करता है । नवल नौकरशाही परम्परा से विद्रोह कर नमक सत्याग्रह में भाग लेता है, अतः नवल पुरानी परम्परा का विरोधी है ।

आदर्श देशभक्त :

उपन्यास में नवल को उपस्थित करते ही लेखक उसकी भावी सम्भावनाओं से परिचित कर देता है । तेरह साल की छोटी सी उम्र में नवल अपने देश की स्थिति और उसकी नई चेतना से

प्रभावित होता है और अपनी भविष्यवाणीखुद बताते हुए ज्ञानप्रकाश से कहता है, "बाबा, बड़े होकर हम भी जेल जाएँगे, आप उदास न हों । भारत माता की जय ।"[44] और नवल 'आई.सी.एस.' और 'एल-एल.बी.' को छोड़ स्वतंत्रता-आन्दोलन में भाग लेने लगता है; खद्दर के कपड़े पहनने लगता है, सर्वदल संमेलन में वालंटियर बनता है और लाहोर कांग्रेस में भी सक्रिय भाग लेता है । उसके जीवन का पथ आदर्श देशभक्ति का है । वह नमक सत्याग्रह-आन्दोलन में सक्रिय भाग लेकर जेल जाना अधिक पसन्द करता है । अपने मातृ-भूमि के प्रति उसके दिल में उदात्त भावना है, तभी तो वह कहता है - "मैं निराश होकर जेल नहीं जा रहा हूँ । जो रास्ता मैंने अपनाया है उसकी यह परिणति है । संघर्ष-संघर्ष-संघर्ष । जीवन भर संघर्ष । यह संघर्ष मेरे अनदर की पुकार है ।"[45] और नवल देश के प्रति अपना कर्तव्य निभाता है । डा.देवीशंकर अवस्थी नवल के बारे में लिखते हैं, "नवल उस युवक पीढ़ी का प्रतिनिधित्व बनकर आता है जिसके प्राणों की पुकार है - संघर्ष, एक प्रकार के अरुप लक्ष्य वाला संघर्ष ।"[46]

नवल के चरित्र में वर्माजी ने इतना संघर्ष और इतने गुण भर दिए हैं कि उसके सामने उपन्यास के अन्य पात्र फीके पड गये हैं । वह तत्कालीन नवयुवकों का पथ प्रदर्शक ही नहीं, सारथी भी है जो उन्हें सही दिशा में ले जाने में सक्षम है, इसमें दो मत सम्भव नहीं हो सकते । डा.शांतिस्वरुप गुप्त नवल को आदर्श चरित्र स्वीकार तो करते हैं किन्तु उसके संघर्ष में कमि याँ महसूस करते हुए लिखते हैं, "नवल के चरित्र में दीप्ति है, चारित्रिक उदारता है, पर प्रथम तो वह उपन्यास के अन्त में आता है और दूसरे एक आदर्शवादी नवयुक के रुप में चित्रित करने के प्रयत्न में लेखक न उसे आन्तरिक संघर्ष में लीन दिखाता है और न बाह्य संघर्ष में संकटों और जीवन-मार्ग की चट्टानों से टकराकर चूर-चूर होते या उन पर विजय पाते हुए दिखाता है । कुल मिलाकर वह एक आदर्शवादी देशभक्त और राष्ट्रसेवी नवयुवक है जो उस समय के संघर्षरत भारत के नवयुवकों का प्रतिनिधित्व करता है ।"[47] डा.शांतिस्वरुप गुप्त का यह मत स्वीकार नहीं किया जा सकता क्यों कि नवल का अन्तर्बाह्य संघर्ष उपन्यास में पर्याप्त मात्रा में दिखाया गया है और लेखक को इसमें सफलता भी मिली है । डा.पुष्पा कोछड ने शांतिस्वरुप गुप्त के ही मत का अनुकरण करते हुए लिखा है, "नवल के चरित्र में दीप्ति है और चारित्रिक उदारता है । वह एक आदर्शवादी देशभक्त और राष्ट्रसेवी नवयुवक है जो उस समय के संघर्षरत भारत के नवयुवकों का प्रतिनिधित्व करता है ।"[48] डा.पुष्पा कोछड़ के इस मत से हम सहमत हैं ।

वर्माजी ने नवल के चरित्र में सारे आदर्शों को भर दिया है । 'भूलें बिसरे चित्र' में यही एक चरित्र है जिसका लेखक अस्पष्ट रुप से समर्थन करता हुआ दिखाई देता है । लेखक ने

नवल के रूप में अपने आदर्शवादी सिध्दान्तों को पाठकों के सामने थोपे हैं । लेखक उपन्यास के अन्य पात्रों को जिस प्रामाणिकता से प्रस्तुत करता है वैसे नवल का चरित्र प्रामाणिक रुप से प्रस्तुत नहीं करता कुल मिलाकर नवल के माध्यम से लेखक ने तत्कालीन परम्परा एवं मान्यताओं पर अंकुश लगाने का सफल प्रयास किया है । एक आदर्श देशभक्त को आदर्श की कसोंटी पर कस कर पाठकों के सम्मुख सफलता से प्रस्तुत किया है ।

विद्या :

विद्या गंगाप्रसाद की बेटी है, वह क्रान्तिकारी नारी का प्रतिनिधित्व करती है । विद्या के मन में अपने परिवारवालों के प्रति ममता-मोह है । वह नहीं चाहती कि उसके शादी के बाद उसके माता-पिता का परिवार तबाह हो इसलिए वह बिन्देश्वरी के स्वार्थी परिवार में अपने को ब्याहना नहीं चाहती । किन्तु अपने पिता के वचन और नवल की विवशता के कारण सिध्देश्वरी के साथ विवाह करने के लिए खुद विवश होती है ।

विद्या पढ़ी-लिखी आधुनिका है, वह अपने विवाह के बाद भी 'बी.ए.' उत्तीर्ण कर लेती है । अतः वह एक बुध्दिमान छात्रा है । अपने विवाह के बाद कुछ ही दिनों में वह अपने ससुरालवालों के अन्याय और अत्याचार के कारण विद्रोह करती है और उनसे घृणा करने लगती है क्यों कि उनके कारण ही उसके माता-पिता का परिवार तबाह हो गया था । एक स्थान पर वह नवल से कहती है "मैं अपने ससुराल वालों से घृणा करने लगी हूँ । जिन लोगों ने मेरे घर को तबाह करके रख दिया, उनके प्रति मुझमें प्रेम कैसे हो सकता है । उस खानदान का हरेक आदमी मुझे पिशाच के रुप में दिखता है ।"[49]

विद्या अपने मान और मर्यादा पर कायम रहती है किन्तु अपने पति और ससुर द्वारा पीटने पर वह अपने पति पर हाथ उठाती है और ससुराल को छोड़ हमेशा के लिए मायके आती है । बिन्देश्वरी सिध्देश्वरी का दूसरा विवाह तय करते हैं और एक दिन उषा के हस्ताक्षर माँगने उसके घर आते हैं । उषा कागजातों पर दस्तखत तो कर देती हैं परन्तु उसके मजमून को अपनी मर्जी से बदल देती है और बिन्देश्वरी के पीछे जूता लेकर भागती है ।

विद्या अपने ससुराल वालों से हमेशा के लिए रिश्ता तोड़ कर मुक्त होती हैं परन्तु वह अपने परिवार वालों पर बोझ बनकर रहना नहीं चाहती इसलिए 'वह नारी शिक्षा सदन' में नौकरी करती है और आत्मनिर्भर जीवन व्यतीत करने लगती है । यहाँ उसकी निर्भयता और स्वाभिमान पर प्रकाश पड़ता है ।

विद्या के मन में राष्ट्र के प्रति उदात्त भाव है, तभी तो वह लाहौर कांग्रेस में अपना योगदान देती है। नवल के नमक सत्याग्रह आन्दोलन में जाते समय वह उसे माला पहनाकर स्वागतपूर्ण विदा करती है। डा.शांतिस्वरुप गुप्त विद्या को अमर पात्र घोषित करते हुए लिखते हैं, "उपन्यास में अमर पात्र की संज्ञा यदि किसी को दी जा सकती है तो केवल विद्या को जो उपन्यास समाप्त कर लेने पर भी पाठक के मानस-पटल पर एक अविस्मरणीय चित्र अंकित कर जाती है।"[50] डा.पुष्पा कोछड़ क्रान्तिकारी विद्या के बारे में लिखती हैं, "विद्या भी पर्याप्त क्रान्तिकारी और प्रभावक है। नारी की मर्यादा, उसका आत्मसम्मान, स्वातंत्र्य और संघर्ष शक्ति की प्रखरता आदि विशेषताएं नारी के जीवन, सामाजिक दायित्व और उसकी मर्यादा को सर्वथा नई व्याख्या और चेतना प्रदान करती हैं। विद्या उन संस्कारों, परम्पराओं और अन्ध विश्वास को जो हमारे जीवन को जड़ और यांत्रिक बनाते हैं, जिनकी किसी प्रकार की सार्थकता नहीं है, स्वयं को उनसे मुक्त भी कराती है और समस्त नारी जाति के लिए मुक्ति का उद्घोष भी।"[51] डा.पुष्पा कोछड़ का मत स्वीकार्य है। उषा अपने अधिकार और स्वतंत्रता के लिए समाज से विद्रोह करती है और अपनी गुलामी और अन्धकार में सड़ने वाली नारियों के सामने मशाल बन जाती है। कुल मिलाकर विद्या मध्य-वर्गीय क्रान्तिकारी नारियों का प्रतिनिधित्व करती है। परंपरागत भारतीय आदर्श नारी-भावना को त्यागकर वह आधुनिक नारी समाज में अपना कीर्तिमान स्थापित करती है। वह पुरुषों की दासता, अन्याय और अत्याचार से विद्रोह करती है और स्वाभिमानी जीवन आरम्भ करती है तथा भारतीय नारी के सामने अपना आदर्श स्थापित करती है।

× × ×

× उपन्यास के गौण पात्र ×

उपन्यास के गौण किन्तु उल्लेखनीय स्त्री-पुरुष पात्र निम्नांकित हैं -

(अ) पुरुष पात्र :

ज्ञानप्रकाश : ज्ञानप्रकाश राजनीतिक चेतना का प्रतीक है, वह एक सच्चे कांग्रेस कार्यकर्ता के रुप में हमारे सामने आता है। वह गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित नवयुवक है। सन् 1912 में वह बैरिस्टरी पढ़ने इंग्लैंड चला जाता है। स्वदेश आकर अनुष्ठान करता, प्रायश्चित करना इन अंधविश्वासों पर वह विश्वास नहीं करता इसलिए इंग्लैंड से वापस आते ही वह अपने घरवालों का त्याग कर देता है और राजनीतिक हलचलों में दिलचस्पी लेने लगता है, इसका आरम्भ होता है अमृतसर कांग्रेस से।

ज्ञानप्रकाश गंगाप्रसाद का शुभचिंतक है। वह गंगाप्रसाद को हमेशा अच्छे-बुरे की पहचान करा देता है। वह गंगाप्रसाद को नेक सलाह देते हुए एक स्थान पर कहता है, "नहीं गंगा, भोग-विलास और नशे में अपने को डुबा देने के अर्थ होते हैं अपने को नष्ट कर देना। इन सबसे काम नहीं चलेगा। तुम्हें अपनी आदतें बदलनी पडेगी ; तुम्हें यह सब छोड़ना पड़ेगा। तुम्हारे बीवी है, तुम्हारे बच्चे हैं, तुम संभ्रान्त कुल और समाज के हो ; तुम्हारे पास मान - मर्यादा है।"[52]

ज्ञानप्रकाश नवीन विचारधारा का नवयुवक है। वह दहेज लेने-देने के विरोधी है, वह जाति-पाति-भेदभाव का विरोधी है, तभी तो वह गेंदालाल जैसे चमार को भी सम्मान देता है। हिन्दू-मुस्लिमों के प्रति उसकी धारणा सराहनीय है, "हम लोग इस देश के निवासी है ; चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलमान। और इस देश के निवासी होने के नाते हम हिन्दू-मुसलमान भाई-भाई होते हैं।"[53] अपने देश की आज़ादी के लिए इन सभी जातियों और सम्प्रदायों को एकत्रित लाने का वह हमेशा प्रयास करता है। ज्ञानसप्रकाश के मन में त्याग की भावना है तभी तो वह देश के लिए अपना विवाह तक नहीं करता।

लेखक ने ज्ञानप्रकाश के माध्यम से अपने तर्क रखे हैं, इसलिए उसके चरित्र में तार्किकता स्पष्ट दिखाई देती है। नवल और विद्या के चरित्र-विकास में ज्ञानप्रकाश का चरित्र बड़ा ही सहायक सिध्द हुआ है। उन दोनों की प्रेरणा है - ज्ञानप्रकाश। उसकी प्रेरणा से ही विद्या नौकरी करती है और नवल क्रान्तिकारी बनता है। ज्ञानप्रकाश में साहस और निड़रता है। एक प्रसंग पर वह विद्या के ससुर से कहता है, "तुम पुलिस को बुला सकते हो बिन्देश्वरीप्रसाद। तुम डिस्ट्रिक्ट जज हो, तुम जानते हो कानून क्या है।"[54] एक न्यायाधीश के सामने इस तरह पेश आना उसके साहस और निड़रता का ही द्योतक है। उपन्यास के अन्त में वह भी नमक सत्याग्रह में सक्रिय भाग लेता है।

ज्ञानप्रकाश का चरित्र अविस्मरणीय और सजीव है किन्तु लेखक ने उसकी पूरी सम्भावनाओं का पूरा-पूरा उपयोग नहीं कर लिया है। लेखक ने अधिकतर संकेतों से ही काम लिया है, प्रत्यक्ष रुप में उसे आन्तर-बाहय संघर्षों में लीन होते नहीं दिखाया है। लेखक ने जैसे प्रमुख पात्रों के विकास और उनके चरित्रोद्घाटन के उद्देश्यसे ही ज्ञानप्रकाश को उपस्थित किया है। कुल मिलाकर ज्ञानप्रकाश आदर्श देशभक्त और क्रान्तिकारी नवयुवकों का प्रतिनिधित्व करता है।

मीर सखावत हुसेन : मीर सखावत हुसेन फकीराना तबीयत के, शांत स्वभाव के नीतिकताप्रेमी आदमी हैं। वे घाटमपुर तहसील के तहसीलदार हैं और उनका झुकाव धर्म और इबादत की तरफ है। अपनी पत्नी और जवान बेटे के मृत्यु के कारण वे अकेले हो जाते हैं। मीर साहब बेहद ईमानदार

व्यक्ति हैं। एक स्थान पर वह ज्वालाप्रसाद को चेतावनी देते हुए कहते हैं, "बरखुरदार, पाप गले आकर पड़ता है, बुजुर्गों का कहना गलत नहीं है ; और हम सब जानते हैं कि पाप को दूर रखना ही मुनासिब है। धन-दौलत से मुहब्बत हरेक इंसान को होती है ; और होता ऐसा है कि यह धन-दौलत का देवता हमारे असली देवता को खा जाता है।"[55] मीर साहब बड़े न्यायप्रिय भी हैं ; वे अपने जीवन में कर्तव्य और न्याय को ममता से अधिक महत्व देते हैं इसलिए वह ज्वालाप्रसाद का एक साधारण सी गलती पर तबादला घाटमपुर से सोरॉव में कर देते हैं ; नायब तहसीलदार से तहसीलदार बनाकर। अतः मीर साहब ईमानदार, न्यायप्रिय और नैतिकता प्रेमी हैं।

"मीर साहब लेखक के अपने विवेक के भी एक अंश के प्रतीक हैं और दूसरी ओर प्राचीन धार्मिकता एवं नैतिकता के सद अंश के भी : पर वे नये जीवन के बहुत उपयुक्त नहीं हैं और लेखक उन्हें शीघ्र ही कथामंच से हटा देता है।"[56] डा. देवीशंकर अवस्थी का यह मत सही है। लेखक ने न तो मीर साहेब के जीवन में ऐसे ठोस उतार-चढ़ाव उपस्थित किये हैं और न ही उनको जीवन से जूझते या संघर्ष करते दिखाया है। लेखक उनके जीवन में आए हुए मोड़ों का मात्र संकेत ही दे देता है। उपन्यास में उनका चरित्र सपाट बन गया है और जब वह कथामंच से उठा लिए जाते हैं, तो पाठक सन्तोष की साँस ले लेता है। कुल मिलाकर उनका चरित्र ईमानदार, धार्मिकता और नैतिकता प्रेमी मध्य-वर्गीय व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है।

लक्ष्मीचन्द : लक्ष्मीचन्द एक स्नेहविहीन शोषक पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। लेखक उसकी भावी सम्भावनाओं की सूचना पहले ही दे देता है। लक्ष्मीचन्द को अपने पिता के गुण विरासत में प्राप्त हुए थे और वह बिलकुल अपनी बाप की तरह बल्कि उससे भी दो कदम आगे पैसों का पुजारी था। अपने पिता की तरह उसने भी सरकारी अफसरों को अपनी ओर कर लिया था और उनको जरिया बनाकर हर एक उल्टा-सीधा काम करवाने में सफल होता था। कुछ ही दिनों में उसने जालसाजी और धोखाधड़ी से लाखों रुपये पैदा किये थे और वह एक बहुत बड़ा पूँजीपति बन गया था।

दिल्ली दरबार के लिए लक्ष्मीचन्द में पचास हजार रुपये का चन्दा दिया था जिसके कारण उसे 'सर' की उपाधि मिली थी। एक तरफ वह सरकार को रुपये देता है वहाँ दूसरी तरफ कांग्रेस को रुपये देता है, ताकि सरकार में उसकी धाक बनी रहे और दूसरी ओर स्वदेशी आन्दोलन जोर पकड़े ताकि उसके मिल का कपड़ा जोरों से बिके। उसने 'बी.ए.' तक अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त की थी जिसके कारण सरकार में उसकी अच्छी पहुँच थी। उसने एक कपड़े की, एक चीनी की और दो तेल की मिलें कानपुर में तथा इलाहाबाद में एक लकड़ी का बहुत बड़ा कारखाना खोल दिया था।

लक्ष्मीचन्द के लिए पैसा ही सब कुछ है । पैसों को वह ममता और भावना से अधिक महत्व देता है । पैसों के लिए वह अपनी माँ को भी गाली देने से नहीं चूकता । मृत्युशय्या पर पड़ी अपनी माँ की अन्तिम इच्छा भी वह पूरी नहीं होने देता और वह उसके हाथ से तिजोरी की चाभी छिन लेता है । लक्ष्मीचन्द किसी को भी बिना मतलब के एक कौड़ी भी देने के खिलाफ है । अपना तर्क देते हुए वह माँ से कहता है, "यह जो करोड़ों की बात करती हो, यह इन्हीं सैंकड़ों और हजारों से ही तो बने हैं अम्माँ । एक-एक पैसा फी गज का मुनाफा होता है, तब कहीं मिल में लाख-दो-लाख का फायदा होता है । जो मेरा है, वह मैं कैसे छोड़ दूं ?"[57] कुल मिलाकर वह एक स्वार्थी, बेईमान, अनैतिक और चरित्रहीन पात्र है । लेखक ने तत्कालीन पूंजीपतियों का सजीव एवं यथार्थ चित्र लक्ष्मीचन्द के माध्यम से चित्रित किया है । निःसन्देह लेखक को इसमें अपूर्व सफलता मिली है ।

<u>प्रेमशंकर</u> : प्रेमशंकर मार्क्सवादी चिंतन धारा का प्रतिनिधित्व करता है । उसका जीवन एक संघर्ष की कहानी है, दुनिया में उसका कोई अपना नहीं है । उसका एकमात्र सच्चा मित्र है - नवल अपने जीवन की व्यथा नवल को बताते हुए वह कहता है, "इसलिए कि मेरा समस्त जीवन संघर्षों का जीवन रहा है । पिता की मृत्यु कब हुई, मुझे याद नहीं ।। मेरी माता ने मुझे पढ़ाया । मुझे पढ़ाने के लिए मेरी माता को कितना अपमानित और लांछित होना पड़ा, तुम इसकी कल्पना न कर सकोगे । और जब मैं इण्टरमीडिएट में था, मेरी माता की मृत्यु हो गई ।"[58] प्रेमशंकर सिध्देश्वरी के कहने पर बिन्देश्वरी के साथ फैजाबाद में वकालत आरम्भ करता है और केवल चार महीनों मे चार हजार रूपये कमाता है । किन्तु जब उसे बिन्देश्वरी की जालसाजी और रिश्वतखोरी का पता चलता है, तो वह पाप और बेईमानी की कमाई को ठुकराकर वापस चला आता है । किसी का गुलाम बनकर रहना उसे पसन्द नहीं । वह सिध्देश्वरी की बहन रानी से जो लंगड़ाकर चलती थी, विवाह करने को राजी होता है किन्तु उसके बदले में वह दहेज लेना नहीं चाहता । यहाँ उसके स्वाभिमान और मानवतावाद पर प्रकाश पड़ता है ।

अंत में प्रेमशंकर पर कम्युनिष्ट होने का दावा लगाया जाता है और उसके गिरफ्तारी का वारण्ट निकलता है, इसकी खबर मिलते ही वह नवल के पास आता है और वहाँ उसका ज्ञानप्रकाश से भी परिचय होता है । ज्ञानप्रकाश उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उसे इन शब्दों में बधाई देते हैं, "प्रेमशंकर, मैं पहले कभी तुमसे मिला नहीं मैंने तुम्हारे सम्बन्ध में नवल से केवल सुना - भर था । मैं तुम्हारी ईमानदारी, तुम्हारे साहस और तुम्हारे विश्वास पर तुम्हे बधाई देता हूँ ।"[59]

कुल मिलाकर प्रेमशंकर एक आदर्श देशभक्त, आदर्श सखा, ईमानदार और स्वाभिमानी नवयुवक है । पर वर्माजी ने उसका उतनाही विकास उपन्यास में किया है, जितना कि भारत में कम्युनिष्ट विचार-धारा का विकास हुआ है, फिर भी प्रेमशंकर तत्कालीन कम्युनिष्ट विचार-धारा के नवयुवकों का प्रतिनिधित्व करने में सफल सिध्द हुआ है ।

भीखू :

उपन्यास में निम्न वर्गीय पात्रों का चित्रण हुआ है और इस वर्ग से सम्बन्धित पात्र अन्य वर्गीय पात्रों से अपेक्षाकृत अधिक सशक्त, सजीव एवं मानवीय बन पड़े हैं । ऐसा ही एक पात्र है - भीखू । वह कहार जाति के घसीटे का पुत्र है । भीखू बचपन से लेकर बुढ़ापे तक ब्रह्मचारी रहकर ज्वालाप्रसाद के परिवार की सेवा करता है । ऐसा लगता है कि वह नौकर न होकर ज्वालाप्रसाद के परिवार का एक सदस्य ही है । जब ज्वालाप्रसाद उसे विवाह करने की सलाह देते हैं तो वह कहता है, "अब बियाह मौत के साथ होई भइया । पचास के ऊपर उमिर हुई गई, औन अबै तक नाही बियाह कीन, तौन अब करब ? फिर हमें बिना बियाए कीन्हें ही घर मिलेगा, बेटवा मिलेगा । तौन हम गंगा के साथ अपन उमरि गुजार देव ।"[60]

भीखू गंगाप्रसाद को अपना ही पुत्र मानता है । जब गंगाप्रसाद शराब और वेश्यागमन जैसे अनैतिक बुराइयों में अपने आप को डुबो देता है, तो भीखू की आत्मा तिलमिला उठती है और वह ज्वाला को उसे अपनी निगरानी में रखने की बिनति करता है । गंगाप्रसाद की असामायिक मृत्यु होती है इसका सर्वाधिक दुःख भीखू को होता है और वह मानो टूट ही जाता है । उसके बाद नवल और विद्या उसके जीने का सहारा बन जाते हैं । यहाँ उसकी गंगाप्रसाद और उसके उच्चों के प्रति ममता से भरी आत्मीयता दिखाई देती है ।

विद्या के शादी पर भीखू अपने जीवन की समस्त पूँजी कन्यादान के रूप में लगा देता है और ज्वालाप्रसाद के परिवार की इज्जत बचाता है, साथ ही अपनी वफादारी का सबूत भी देता है । यहाँ उसकी त्याग की भावना और मानतावादी दृष्टि पर प्रकाश पड़ता है । ज्वाला की तरह उसके पास भी अनुभओं का भण्डार है, जिसने अपने जीवन में अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं परन्तु उसे नवल का जेल जाना, विद्या का नौकरी करना कुछ अटपटा सा लगता है । कुल मिलाकर भीखू का चरित्र एक आदर्श सखा, आदर्श सेवक और आदर्श पुत्र-भक्त के रूप में उपन्यास में उजागर हुआ है । तत्कालीन निम्न वर्गीय आदर्श सेवकों का प्रतिनिधित्व करने वाला भीखू उपन्यास का अविस्मरणीय

तथा सजीव चरित्र बन गया है ।

स्त्री - पात्र

उपन्यास में नारी पात्रों की संख्या पुरूष - पात्रों से कम है, फिर भी पुरूष पात्रों की अपेक्षा स्त्री-पात्र अधिक सजीव, पुष्ट एवं मानवीय बन गए हैं । इनमें परम्परागत भारतीय आदर्श नारियों के साथ - साथ चरित्रहीन तथा काम-वासना से सम्बन्धित नारी-चरित्रों का भी चित्रण हुआ है ।

जैदेई :

जैदेई उच्च वर्गीय विधवा नारियों का प्रतिनिधित्व करती है । वह महाजन प्रभुदयाल की पत्नी तथा लक्ष्मीचन्द की माँ है । अपने पति के मृत्यु के बाद वह ज्वालाप्रसाद का सहारा चाहती है । ज्वालाप्रसाद को अपना बनाने के लिए वह उससे शारीरिक सम्बन्ध जोड़ देती है । होली के दिन अपने घर आये ज्वालाप्रसाद से वह कहती है, "देवरजी, होली खेलने आए हो, लेकिन तुमने मुझे गुलाल नहीं लगाया, तुमने मुझे अपनी बाँहों में नहीं भरा । मेरे साथ जी भरकर होली खेलो, कोई, हौसला बाकी न रह जाए । मेरे पास जो कुछ है वह तुम्हारा है - रूपया - पैसा, रूप - जवानी सभी कुछ ।"[61]

जैदेई ज्वालाप्रसाद का आदर करती है, उसकी हर बात पर अमल करना उसका धर्म बन जाता है । उसके कहने पर जैदेई बरजोरसिंह की बेवा को खुद सौ अशर्फियाँ दिलवाकर उसकी जमीन जो जैदेई के ही नाम हो गई थी, वापस कर देती है । यहाँ उसके उदार मानवीय स्वभाव का परिचय मिलता है ।

जैदेई परम्परावादी है । स्त्रियों का पुरूषों के साथ खुले - आम घूमना उसे पसन्द नहीं । विदेशी दवा लेने से भी वह कतराती है; उसकी धारणा है कि विदेशी दवा से भारतियों का धर्म भ्रष्ट हो जाता है । मलेरिया से ग्रस्त हो जाने पर वह किसी वैद्य से ही ईलाज करवाने लगती है और बाद में भी वह ज्वालाप्रसाद के समझाने पर ही डाक्टरी ईलाज करवाने के लिए राजी होती है ।

जैदेई के दिल में उदारता के साथ त्याग की भावना भी है । वह ज्वाला के पुत्र गंगाप्रसाद को अपना ही पुत्र मानती है और उसकी पढ़ाई - लिखाई और पालन - पोषण की जिम्मेदारी खुद

उठाती है; उसकी हर आवश्यकता की वह पूर्ति कर देती है । इतनाही नहीं, अपनी मृत्यु से पहले वह अपनी पूँजी गंगाप्रसाद को देना चाहती है लेकिन लक्ष्मीचन्द उसका विरोध करता है तो वह कहती है, "ठीक अपने बाप के गुण पाए हैं तूने लक्ष्मी । लेकिन, लेकिन तू मुझे न रोक सकेगा । जो मेरा है, उसे देने का मुझे पूरा हक है । इससे तू मुझे नहीं रोक सकता ।"[62] यहाँ उसकी गंगाप्रसाद के प्रति ममता की भावना स्पष्ट दिखाई देती है । अतः जैदेई का चरित्र वात्सल्यमय माता; निस्वार्थी, उदार एवं मानवतावादी है । फिर भी उसमें कुछ चरित्रिक कमजोरियाँ भी हैं । वर्माजी ने उसे पूर्ण नैतिक बनाने का भरसक प्रयास किया है किन्तु ज्वालाप्रसाद के साथ उसका अवैध - यौन - सम्बन्ध छुपा नहीं रहता । वह अन्त तक ज्वालाप्रसाद से एकनिष्ठ रहती है; उसकी मृत्यु से पाठकों के मन में गहरा और उदात्त अवसाद पैदा होता है ।

मलका :

उपन्यास मे वेश्याओं का भी चित्रण हुआ है । मलका समाज में उपेक्षित वेश्याओं का प्रतिनिधित्व करती है । वर्माजी ने मलका के माध्यम से वेश्या समस्या और उनके सुधारवादी दृषिकोण तथा उनके आदर्श - भावनाओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है । मलका एक वेश्या जीवन बिताने वाली भावनाशील नारी है । उसके जीवन में गंगाप्रसाद आता है । वह एक वेश्या होते हुए भी गंगाप्रसाद से एकनिष्ठ प्रेम करती है, उससे विवाह कर इस दलदल और सामजिक उपेक्षा से मुक्ति पाना चाहती है । गंगाप्रसाद अपने अस्तित्व और सामजिक बन्धनों के कारण उसके साथ खुद ब्याह न कर उसे अलीरजा के साथ ब्याह करने का सुझाव देता है, तो वह इनकार कर देती है । यहाँ उसका गंगाप्रसाद के प्रति एकनिष्ठ प्रेम दिखाई देता है ।

मलका गंगाप्रसाद की मजबूरी को जानकर भाग जाती है और हिन्दु-धर्म स्वीकार करके कांग्रेसी सत्यव्रत शर्मा से विवाह कर लेती है और मलका से माया शर्मा बन जाती है । सत्यव्रत से विवाह कर लेने के पश्चात वह गंगाप्रसाद से अपना शारीरिक सम्बन्ध हमेशा के लिए तोड़ देती है । अपने पति के साथ एकनिष्ठ रहकर खुद भी कांग्रेसी बनकर उसमें सक्रिय भाग लेती है । इस प्रकार मकलका एक वेश्या जीवन के कारागृह से निकलकर परिवरिक-जीवन बिताती है और अपनी कुंठा, पीडा, और उपेक्षा से पीडित तथा समाज में बंदीस्त वेश्याओं के सामने अपने सुधारवादी दृष्टिकोण का आदर्श रखती है । उसका चरित्र साधारण होते हुए भी विशिष्ट है, अविस्मरणीय है । वह एक वेश्या होते हुए भी पवित्रता की प्रतिमूर्ति है ।

सतवंती या संतो :

संतो सामन्तवादी (उच्च वर्गीय) विलासी अभिरूची प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करने वाली तथा व्यभिचारी नारी - चरित्र है । जौहरी राधाकिशन की पत्नी संतो एक सामाजिक स्तर पर गिरी हुई स्त्री है । पहले वह एक पतिव्रता नारी रहती है किन्तु बाद में गंगाप्रसाद उससे यौन सम्बन्ध स्थापित करता है, उसके बाद वह एक प्रतिष्ठित वेश्या ही बन जाती है । उसकी अति सुन्दरता ही उसके गिरने का कारण बन जाता है । एक स्थान पर वह कहती है, "भगवान ने भी मेरे साथ एक अच्छा - खासा खिलवाड़ किया है । इतना अधिक रूप दिया है मुझे, और मेरा यह रूप मेरे गिरने का सबसे बड़ा प्रलोभन है ।" वह आगे कहती है - "सब-कुछ तो मिला है मुझे . और इस सबके साथ उसने मेरे मन को एक बहुत बड़ा असन्तोष भी दिया है ।"[63]

संतो एक बार गिरने के बाद गिरती - गिरती ही चली जाती है । उसकी सुन्दरता को सर्वप्रथमक हासिल करता है गंगाप्रसाद । उसके बाद संतो का सामाजिक भय जाता रहता है और वह सत्यजीत प्रसन्नसिंह यहाँ तक की अंग्रेज अफसर मेजर वाट्स के साथ भी अपने शरीर का सौदा करती है । मेजर वाट्स द्वारा वह अपने पति को 'राज बहादुर' का खिताब दिलाती है । राजा सत्यजीत प्रसन्नसिंह उसे एक रात में दस लाख रूपए कीमत की एक माणिक से बनी मूर्ति भेंट करते हैं । संतो अपने नैतिक स्तर को गिराने का जिम्मेदार गंगाप्रसाद को ठहराती है । वह कहती है, "यह सच है कि राज बहादुर बने मेरे प्रयत्नसे, लेकिन तुम्हीं ने तो मुझे वह बना दिया है जो मैं हूँ ।"[64] पर्दे में रहनेवाली संतो पर्दे से बाहर आते ही सामाजिक अनैतिकता में इतनी गिर जाती है कि उसके लिए सामाजिक नैतिकता का कोई अस्तित्व ही नहीं रहता । कुल मिलाकर संतो समाज में फैले हुए परिवारिक असंतुष्ट और कामवासना से ग्रस्त होकर गिरी हुई नारियों का प्रतिनिधित्व करती है । लेखक ने उसका चरित्र यथार्थता और सजीवता के साथ चित्रित किया है ।

उषा :

रायबहादुर कामतानाथ की बेटी उषा नवल की मंगेतर है । अपने पिता के साथ वह स्विन्झलैण्ड हो आती है । वह भारतीय स्त्री के नौकरी करने के खिलाफ है । नारी सम्बन्धि उसका दृष्टिकोण परम्परवादी है । विद्या के नौकरी करने के सम्बन्ध में वह नवल से कहती है, "वह घर के बाहर निकलकर गुलामी करे, वह पुरूषों के कन्धे - से - कन्धा मिलाकर काम करे,

परिवार और घर की मर्यादा को तोड़ दे - आपकी यह नई दुनिया आप ही को मुबारक हो ।'[65] वह स्त्री की नौकरी करने को उसकी विवशता और मजबूरी समझती है ।

उषा हमेशा ऐशोआराम की जिंदगी बसर करना चाहती है, ऊंचे लोगों से मिलना पसन्द करती है, निम्न वर्गों से उसे कोई सरोकार नहीं । वह चाहती है कि उसका होने वाला पति 'आई.सी.एस. बनकर सरकार में ऊँचा स्थान प्राप्त करे । किन्तु स्वाभिमानी नवल इनमें से कुछ भी नहीं करता तो वह उसे त्यागकर राजेन्द्रकिशोर के साथ विवाह करना चाहती है । इस प्रकार उषा एक चंचल तितली के समान है, जो किसी के प्रति एकनिष्ठ नहीं रहती । कुल मिलाकर उषा माता-पिता के अति लाड़-प्यार, ऐशो आराम और अपने मानसिक भटकाव के कारण दिशाहीन - जीवन बिताने वाली आधुनिक युवतियों का प्रतिनिधित्व करती है । उसका चरित्र सजीव और यथार्थ है ।

<u>छिनकी</u> :

लेखक ने छिनकी के माध्यम से समाज में फैले निम्न जाति के परम्परागत मान्यताओं, अन्ध -विश्वासों पर करारा व्यंग्य किया है । छिनकी घसीटे की दूसरी पत्नी थी । वह मुन्शी शिवलाल को दारू पिलाने के साथ-साथ उनकी पलंग सेवा में भी दत्तचित थी । ज्वालाप्रसाद की पत्नी यमुना उसे अपनी सास ही मानती थी । छिनकी कहार जाति की है और उसके मन में यह परम्परागत धारणा बराबर बनी रहती है कि उसके छुआछूत से उच्च जाति का परलोक बिगड़ जाता है । जब मुन्शी शिवलाल उसे रवाना बनाने को कहते हैं, तो वह जवाब देती है, "राम-राम । हम कच्ची रसोइयाँ माँ कैसे जाई ? कलप - वास कर रहे हो तौन धरम - करम का तो खयाल राखौ । चौका माँ हमरे जाँय से चौका छूत हुइ जइहै न ।" वह आगे कहती है - "तुम्हारे हाथ जोड़ित हन, ई पाप हमसे न कराओ - हम चौका माँ न घुसब । तुम्हार परलोक हमरे हाथ न बिगड़ेव ।'[66]

छिनकी अन्त तक मुन्शी शिवलाल के परिवार की सेवा करती है । इतना ही नहीं वह अपने इकलौते बेटे भीखू को भी इस परिवार की सेवा मे लगा देती है । ऐसा लगता है कि छिनकी नौकरानी न होकर मुन्शी शिवलाल के परिवार की एक सदस्या ही है । डा. देवीशंकर अवस्थी छिनकी और भीखू के सम्बन्ध में लिखते हैं, "छिनकी या भीखू जैसे पात्र सबसे अधिक विशिष्ट, पुष्ट एवं मानवीय हैं, पर उनका कथा के भीतर अधिक विकास नहीं हो सका - संभवतः

लेखक की योजना में इसके लिए गुंजाइश नहीं थी ।'[67] अतः छिनकी का चरित्र सजीव है, वह निम्नवर्गीय पिछड़े जाति के ग्रामीण स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है ।

उपन्यास के अन्य गौण पात्रो में अनेक छोटे - मोटे विविध किन्तु विशिष्ट पात्र आते हैं, जो कुछ देर के लिए अपना प्रभाव पाठकों पर डालते हैं और लेखक उन्हें शीघ्र ही कथामंच से उठा लेता है । लगभग सभी पात्र उच्च-मध्य और निम्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं । बरजोरसिंह, गजराजसिंह और राजा चन्द्रभूषणसिंह आदि पात्र विघटनशील सामन्त वर्ग के प्रतिनिधि चरित्र हैं । मुन्शी रामसहाय जमींदार होते हुए भी विवेक के एक अंश तथा मानवतावादी हैं । वर्माजी ने उनके माध्यम से रूढिगत जातीय अंध-विश्वासों का पर्दाफाश किया है ।

उच्च वर्ग से सम्बन्धित विलासी, अमानवीय तथा अधिकतर अनैतिक पात्र हैं - राजा सत्यजीत प्रसन्नसिंह, राधाकिशन, श्रीकिशन, राजा धरनीधरसिंह, कैलासो, राजा सरोहन, मीर जाफर अली, ठाकुर विरभानसिंह अदि ।

उपन्यास में मध्य - वर्गीय स्त्री-पुरूष पात्रों का चरित्र अधिक हुआ है । लाल रिपुदमनसिंह नैतिकता प्रेमी पात्र है । वह अपनी व्यभिचारी पत्नी और उसके प्रेमी का कत्ल कर देता है । मि.फरहतुल्ला एक सच्चे कांग्रेस - कार्यकर्ता और साम्प्रदायिकतावादी व्यक्ति हैं । सत्यव्रत एक आदर्श-देशभक्त और मानवीय पात्र है । वह खुद ब्राह्मण होकर भी वेश्या मलका से विवाह करता है और उसका उध्दार करता है । उपन्यास में वह एक अमर पात्र बन गया है । रायबहादुर कामतानाथ समाज के वे इकाई हैं, जिन्हें अपने शानोशौकत का बखान करने में मजा आता है । बिन्देश्वरी और सिध्देश्वरी समाज के वे बाप - बेटे हैं जो दहेज में एक पैसा कम नहीं लेते और विवाह के बाद बाप-बेटे मिकलकर बहुओं को पीटते हैं, साथ ही प्रेमशंकर जैसे वकिलों को मोहरा बनाकर बेईमानी से हजारों रूपये जनता से लूटते हैं । मीर जाफर अली और अलीरजा गिरगिट की तरह रंग बदलने वाले साम्प्रदायिक व्यक्ति हैं । मीर जाफरअली नायक जाति की रूक्मा को खरीदकर उसे जबरदस्ती मुसलमान बनाने की चेष्टा करते हैं, तो अलीरजा विवाहित मलका को भगा ले जाता है और उसे अपनी बेगम बनाने की पूरी चेष्टा करता है । उपन्यास में अंग्रेजी पात्र भी आये हैं, मि.हेरिसन अहंकारी अंग्रेज पूँजिपतियों का प्रतिनिधित्व करता है, तो मेजर वाट्स उच्चस्तरीय जीवन बिताने वाले कामग्रस्त अंग्रेज अफसरों का प्रतिनिधि चरित्र है जिसे संतो के साथ अनैतिक यौन सम्बन्ध रखने के कारण अपमानित होकर स्वदेश लौटना पड़ता है ।

उपन्यास में भीखू, छिनकी आदि निम्न वर्गीय पात्रों के अलावा अन्य गौण पात्र भी सजीव एवं सशक्त बन गए हैं । किन्तु लेखक उन्हें घटनाओं की त्वरा में शीघ्रता से वापस उठा लेता है । जग्गु पहलवान, बुध्दुसिंह, बिशनलाल, घुमरु पण्डित आदि पात्र कुछ समय तक कथामंच पर आते हैं और चले जाते हैं । धार्मिक क्षेत्र से सम्बन्धित आर्य समाज के स्वामी जटिलानंद हिन्दू-धर्म के आचार्य हैं तो अल्लामा वहशी मुस्लिम-समाज के मौलवी ।

निम्न जाति के नारी चरित्रों में और एक उल्लेखनीय चरित्र है रुक्मा का । रुक्मा नायक जाति की है और उसके माता-पिता मीर जाफरअली से बहुत बड़ी रकम लेकर उसे बेच देते हैं । पहले वह दानसिंह से मुहब्बत करती थी किन्तु अपने बेचे जाने पर वह अपने मालिक के प्रति एकनिष्ठ रहना अपना धर्म मानती है । वह अपने मालिक से एकनिष्ठ रहने को तैयार है लेकिन अपना धर्म छोड़कर मुसलमान बनने को वह किसी भी शर्त पर राजी नहीं होती । लेखक ने रुक्मा के माध्यम से लड़कियों को बेचने वाली नायक-जाति की खोखली अहंमन्यता और उनके परम्परागत मान्यताओं पर व्यंग्य किया है ।

'भूले बिसरे चित्र' पचास वर्ष के परिवर्तनशील भारतीय जीवन का सजीव चित्र उपस्थित करता है । इस विस्तृत कालखंड को समग्रता से चित्रित करने के लिए लेखक ने अनेक सजीव एंव यथार्थ चरित्रों का निर्माण किया है । उपन्यास के चरित्र सजीव तथा यथार्थ होने के कारण स्वाभाविक एवं प्रभावशाली बन पड़े हैं । इसमें उच्च वर्ग से लेकर मध्य-वर्ग तथा निम्न वर्ग तक के सभी चरित्र समाविष्ट हैं । अनेक आलोचकों ने चरित्र-चित्रण की दृष्टि से 'भूले बिसरे चित्र' में त्रुटियाँ दिखलाई हैं । डा.शांतिस्वरुप गुप्त को शिकायत है कि उपन्यास "केवल मध्य-वर्ग से सम्बध्द होने के कारण वह सम्पूर्ण देश का प्रतिनिधित्व भी नहीं करता, अतः उसमें समाज का प्रतिनिधित्व करने का गुण (Choric Character) भी अंशिक रुप से ही है । लेखक की दृष्टि बाहरी जीवन पर, घटनाओं पर ही केन्द्रित है, अतः स्वस्थ होते हुए भी उसमें महाकाव्यात्मक लेखक की गहराई और नुकीलापन नहीं है । चरित्र-चित्रण में गहराई के स्थान पर चौरसता है, पात्र सपाट है । उपन्यास में जीवन के विविध अंग तो चित्रित हैं पर वे न तो संश्लिष्ट हैं और न जीवन के अन्तरंग का परिचय देते हैं ।"[68] डा.शांतिस्वरुप गुप्त के इस मत से हम सहमत नहीं हैं । हमने पहले ही कह दिया कि उपन्यास में सभी वर्गों का चित्रण हुआ है । उपन्यास में मध्य-वर्गीय सामाजिक जीवन का चित्रिण अधिक है किन्तु उच्च-वर्गीय जीवन का भी कम चित्रण नहीं है, बल्कि इस वर्ग से सम्बन्धित चरित्रों का पूरा-पूरा उपयोग लेखक ने लगभग कर ही लिया है । उपन्यास का प्रत्येक चरित्र समाज के किसी-न-किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम है । उपन्यास के

निम्नवर्गीय चरित्र तो अत्यंत सजीव, पुष्ट एवं तत्कालीन समाज के निम्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। चरित्र-चित्रण में पर्याप्त गहराई है । यह सच है कि अधिकतर चरित्र सपाट एवं चौरस हैं किन्तु ज्वाला प्रसाद, गंगाप्रसाद, नवल, विद्या, मलका, सतवंती जैसे चरित्रों को सपाट चरित्र की संज्ञा देना उनके प्रति अन्याय होगा ।

डा. शंकर मुदगल देवीशंकर अवस्थी के ऊपरि मत का खण्डन करके अपने मत को प्रकट करते हुए लिखते हैं, "उपन्यास में तीनों वर्गों का चित्रण विस्तृत रुप से हुआ है, समाज का यथार्थ एवं जीवंत चित्र प्रतिबिंबित हुआ हैं; छोटे से छोटे पात्र की आंतरिक विशेषता का प्रभावकारी चित्रण हुआ है, पात्रों का चित्रण जितना विस्तृत है उतना गहरा भी । जीवन के सभी अंगों का चित्रण हुआ है और अनेक पात्र जीवन के विभिन्न अंगों का परिचय देते हैं ।"[69] डा. देवीशंकर अवस्थी को यह शिकायत है कि "पात्रों में पर्याप्त गहराई एवं वर्तुलता नहीं आ पाई है । उपन्यास में पात्र अधिकांशतः चौरस एवं वर्गगत (टाईप) हो गए है । उनकी वैयक्तिकता लुप्त हो गई है, यहां तक कि पात्रों के घनिष्ठ संबंधों में भी पर्याप्त आंतरिकता नहीं आ सकी है । सतह पर का यह चित्रण परिवार के ही संबंधो में नहीं है, अधिकारियों, पूंजीपतियों, राजनीतिक कार्यकर्ताओं आदि के बारे में भी अधिकांशतः सूचनाएं ही मिलती हैं, उनके जीवन के संश्लिष्ट चित्र नहीं ।"[70] डा. देवीशंकर अवस्थी के इस मत से हम पूर्णतः सहमत नहीं हैं । पात्रों में पर्याप्त गहराई और आन्तरिकता है । मुंशी शिवलाल - छिनकी, ज्वालाप्रसाद - यमुना - जैदेई, गंगाप्रसाद - मलमा - सतवंती - रुक्मिणी, नवल, विद्या, भीखू आदि पात्रों के घनिष्ठ सम्बन्धों में पर्याप्त गहराई और आन्तरिकता स्पष्ट दिखाई देती है ।

जहाँ देवीशंकर अवस्थी चरित्रों की वैयक्तिकता, गहराई और उनके घनिष्ठ सम्बन्धों में दोष दिखाते हैं, वहाँ उपन्यास के प्रतिनिधि पात्रों की सराहना करते हुए लिखते हैं, "जहाँ तक पात्रों के वर्गगत प्रतिनिधित्व का प्रश्न है, वर्माजी लगभग प्रेमचन्द के धरातल पर ही सिध्द होते है ।"[71] यह सच है कि उपन्यास के लगभग सभी पात्र वर्ग प्रतिनिधि चरित्र बन गएं है । नेमिचन्द्र जैन उपन्यास के चरित्रों को रेखाचित्र का संग्रह मात्र मानते हैं । उनका मंतव्य है कि, "पात्रों कि दृष्टि से 'भूले बिसरे चित्र' अनगिनती दिलचस्प रेखाचित्रों का संग्रह मात्र है । इन रेखाचित्रों के पात्रों में कहीं-कहीं सजीवता है पर वह उस रेखाचित्र के चौकटे के भीतर तक ही सीमित हैं । प्रायः ये चौखटे अपने भीतर की तसवीर को एक प्रकार का सौंदर्य प्रदान करते हैं, एक सुसज्जित आकृति और रुप प्रदान करते हैं ।" वे आगे यहाँ तक लिखते हैं कि "कई पात्र बड़ी खूबसूरती से और प्यार के साथ अंकित किये हुए आकर्षक सूक्ष्म चित्र जैसे लगते है । पर उनके जीवन की गहराई, उनके व्यक्तित्व की मूल गतिशीलता का अनुभव हमें उपन्यास में नहीं होता ।"[72]

निष्कर्ष :

'भूले बिसरे चित्र' में मानव जीवन के अनेक विविधतापूर्ण छोटे-बडे पात्र मिलाकर विगत पचास वर्षो के भूले बिसरे चित्रों को यथार्थ धरातल पर सजीवता के साथ रुपायित करते हैं । चरित्रों की विविधता, सजीवता, अनेकता के कारण 'भूले बिसरे चित्र' चरित्र-चित्रण की दृष्टि से महाकाव्यात्मक गरिमा से मंडित है । उपन्यास के अधिकतर चरित्र सपाट या चौरस बन गये हैं । भीखू, छिनकी, सत्यव्रत, ज्ञानप्रकाश आदि पात्र सपाट एवं एक रेखीय हैं । उपन्यास के लगभग सभी पात्र वर्गगत (टाईप) प्रतिनिधि चरित्र बन गए हैं । मुन्शी शिवलाल सामन्तवादी विचरधारा का प्रतिनिधि है तो ज्वालाप्रसाद नौकरशाही के आरम्भ और पूँजीवाद के उदय का, गंगाप्रसाद नौकरशाही परम्परा के चरमोत्कर्ष और उसके अन्त का तो नवल क्रान्तिकारी चेतना का; विद्या विद्रोहीणी क्रान्तिकारी नारी का प्रतिनिधित्व करती है । भीखू और छिनकी निम्नवर्गीय सेवक वर्ग के प्रतिनिधि हैं तो लक्ष्मीचन्द पूँजीवाद का प्रतिनिधि चरित्र है ।

उपन्यास के प्रमुख पात्रों में मुन्शी शिवलाल, ज्वालाप्रसाद, गंगाप्रसाद, नवल और विद्या का समावेश है । ज्वालाप्रसाद निःसन्देह उपन्यास का नायक है । चरित्रों में पर्याप्त गहराई, वर्तुलता और आन्तरिकता दिखाई देती है । लगभग सभी चरित्र मानव-जीवन से लिए गए हैं अतः चरित्र-चित्रण में विविधता, रोचकता और विश्वसनीयता आ पाई है । उपन्यास में निम्नवर्गीय पात्र, उच्च और मध्य वर्गीय पात्रों की तुलना में अपेक्षाकृत अत्यंत कम दिखाई देते हैं और जो पात्र इस वर्ग से सम्बन्धित हैं, लेखक ने उनका पर्याप्त विकास भी नहीं किया है । कुल मिलाकर 'भूले बिसरे चित्र' चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भगवती बाबू की अत्यंत सफल कृति है ।

* * * *

* संदर्भ संकेत सूची *

1. सिंह त्रिभुवन डा., हिन्दी उपन्यास : शिल्प और प्रयोग, पृ.356
2. लोढ़ा महावीरमल डा., हिन्दी उपन्यासों का शास्त्रीय विवेचन, पृ.16
3. - वही - पृ.19
4. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ.4
5. कोछड पुष्पा डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ.106
6. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ.2
7. - वही - पृ.104
8. - वही - पृ.171
9. मोहन नरेन्द्र सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ.203
10. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ.121
11. - वही - पृ. 172
12. लोधा अमरसिंह डा., प्रेमचन्दो-तर हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना, पृ. 273
13. वार्ष्णेय कुसुम डा., भगवतीचरण वर्मा, पृ. 114
14. सिंह त्रिभुवन डा., हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, पृ. 484-85
15. गुप्त शांतिस्वरुप डा., हिन्दी उपन्यास : महाकाव्य के स्वर, पृ. 63
16. मोहन नरेन्द्र सं.., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ.203
17. वर्मा भगवतीचरण, भूल बिसरे चित्र, पृ.102
18. - वही - पृ. 170-71
19. - वही - पृ. 70
20. - वही - पृ.100
21. - वही - पृ.127
22. - वही - पृ.687
23. - वही - पृ.674
24. - वही - पृ.395
25. - वही - पृ. 712

26. - वही - पृ. 712

27. मुदगल शंकर डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ. 281

28. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 233

29. - वही - पृ. 251

30. - वही - पृ. 398

31. - वही - पृ. 399

32. - वही - पृ. 397

33. - वही - पृ. 535

34. - वही - पृ. 594

35. - वही - पृ. 595

36. लोढ़ा अमरसिंह डा., पेमचन्दो-तर हिन्दी उपन्यासो में सामजिक चेतना, पृ. 247

37. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 445-46

38. मुदगल शंकर डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ. 281

40. कोछड पुष्पा डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ. 107

40. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 584

41. - वही - पृ. 699

42. - वही - पृ. 594

43. - वही - पृ. 707

44. - वही - पृ. 477

45. - वही - पृ. 707

46. मोहन नरेन्द्र सं.., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ. 204

47. गुप्त शांतेस्वरुप डा., हिन्दी उपन्यास : महाकाव्य के स्वर, पृ.63

48. कोछड पुष्पा डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ. 107

49. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 624

50. गुप्त शांतेस्वरुप डा., हिन्दी उपन्यास : महाकाव्य के स्वर, पृ. 63

51. कोछड़ पुष्पा डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ.107

52. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 446

53. - वही - पृ. 431

54. - वही - पृ. 660

55. - वही - पृ. 40

56. मोहन नरेन्द्र सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ.204

57. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ.384

58. - वही - पृ. 571

59. - वही - पृ. 639

60. - वही - पृ. 434

61. - वही - पृ. 100

62. - वही - पृ. 384-85

63. - वही - पृ. 274

64. - वही - पृ.355

65. - वही - पृ. 691

66. - वही - पृ. 118

67. मोहन नरेन्द्र सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ. 203

68. गुपत शांतिस्वरुप डा., हिन्दी उपन्यास : महाकाव्य के स्वर, पृ. 65

69. मुदगल शंकर डा., हिन्दी के महाकाव्यात्मक उपन्यास, पृ.285

70. मोहन नरेन्द्र सं., आधुनिक हिन्दी उपन्यास, पृ. 203

71. - वही - पृ. 203

72. जैन नेमिचन्द्र, अधूरे साक्षात्कार, पृ.91

* * *